॥ ॐ ॥

कहानी संग्रह

भाग तीसरा

संग्रहकर्ता :—

श्री विदुषीरत्न ब्र० पं० चंदाबाईजी, संपादिका
जैन महिलादर्श और संस्थापिका व संचालिका
श्री जैनबाला विश्राम, धर्मकुञ्ज-आरा

—: प्रकाशक :—

मूलचंद किसनदास कापड़िया
प्रकाशक जैन महिलादर्श व मालिक दि० जैन पुस्तकालय-सूरत

स्व० जैन महिलारत्न पं० ललिताबहेन संचालिका
र० ब० श्राविकाश्रम बम्बईके स्मरणार्थ
'जैन महिलादर्श" के ४४ वें
वर्षके ग्राहकोंको भेंट।

प्रथमावृत्ति] वीर सं० २४९२ [प्रति १२००

मूल्य : रु० १-७५

निवेदन

हमने "जैन महिलादर्श" में समय समय पर प्रकाशित २५ कहानियोंका एक संग्रह प्रकट करके 'जैन महिलादर्श' के ४२ वें वर्षके ग्राहकोंको भेंट किया था। फिर इसका दूसरा भाग २० कहानियोंका संग्रह प्रकट करके ४३ वें वर्षके ग्राहकोंको भेंट किया था। और अब इसका तीसरा भाग (१२ बड़ीर कहानियोंका संग्रह) भी प्रकट करके 'जैन महिलादर्शके ४४ वें वर्षके ग्राहकोंको भेंटमें देनेका हम प्रबन्ध कर सके हैं।

इस प्रकार शास्त्रदानी मिलने ही जाये तो 'दर्श' प्रति वर्ष अपने ग्राहकोंको एक पुस्तक भेंट दे सकेगा। यह हजारों रु०का बड़ा भारी शास्त्रदान होता है।

इस संग्रहकी कुछ प्रतियां विक्रयार्थ भी निकाली गई हैं। आशा है इस संग्रहका अच्छा प्रचार हो जायगा।

वीर सं० २४९२
ता० १-३-६६.
सूरत

नि०
मूलचंद किसनदास कापड़िया
प्रकाशक

र० रु० श्राविकाश्रम बम्बईको अपना जीवन अर्पण करनेवाले

स्व० जैन महिलारत्न—

पं० ललिताबहेन-अंकलेश्वर

विधिका निर्माण कुछ अलग ही होता है मनुष्य क्या सोचता है और क्या होता है। ऐसा ही प्रकार स्व० ललिताबहेन मूलचन्द अंकलेश्वरके साथ हुआ था और आपका जीवन प्रत्येक बहेनको अतीव अनुकरण होनेसे ही आपका संक्षिप्त परिचय यहां दिया जाता है—

श्री ललिताबहेनका जन्म धवल जयधवल ग्रंथराजके उद्गमस्थान अंकलेश्वरमें श्री मूलचन्द तलकचन्द (वीसा मेवाड़ा दि० जैन) के यहां सन् १८६९ में हुआ था व माताका नाम नंदकोरबाई था। पालीतानाके धार्मिक सेवाभावी अतीव योग्य मुनीम धरमचंदजी हरजीवनदास आपके मामा होते थे अतः आपमें धार्मिक रुचि बचपनसे ही थी। यद्यपि आपने गुजराती तीन धोरण तक ही शिक्षा प्राप्त की थी तो भी भविष्यमें वो बड़ी पंडिता हुई थी।

आपका विवाह १३ वर्षकी आयुमें योग्य युवान श्री शीवलाल हीराचन्दके साथ हुआ था। लेकिन आपका भविष्य कुछ दूसरा ही था अतः आप २५ वर्षकी युवान आयुमें विधवा हो गई थी तब आपके भाई (फोईके पुत्र) श्री छोटालाल घेलाभाई गांधीने अपने यहां बुलाकर आपको योग्य बनानेका कार्य हाथमें लिया था। व आपको खुदने ही संस्कृत पढ़ाया व साथ ही धार्मिक ज्ञान भी दिया।

इसके बाद स्व० दानवीर जैन कुलभूषण सेठ माणेकचन्द हीराचन्द जे० पी० बम्बईने अपनी विधवा पुत्री श्रीमती जैन

श्रीमती स्व० जैन महिलारत्न पंडिता ललिताबाईजी
र० रु० श्राविकाश्रम–बम्बई।

जन्म–अंकलेश्वरमें सन् १८६९ स्वर्गवास सन् ६–६–१९४६

आपने करीब ४५ साल तक र० रु० श्राविकाश्रम बम्बईकी अथक सेवा·ऑनररीरूपसे की थी।

महिलारत्न मगनव्हेन जे० पी० और सोलापुरके सेठ हीराचंद नेमचन्द दोशीकी विदुषी विधवा पुत्री श्री० कंकूव्हेनने अहमदाबादमें श्राविकाश्रमकी स्थापना सन् १९१० में की तब सेठ छोटालाल घेलाभाई गांधीका इसमें पूरा साथ था, आप मन्त्री हुए थे व आपने अपनी व्हेन ललिताव्हेनको इस आश्रममें आजीवन सेवार्थ समर्पण कर दिया अतः मगनव्हेन कंकूव्हेन व ललिताव्हेन ये तीनों त्रिपुटी व्हेनोंने इस आश्रमका संचालन हाथमें लिया, तब प्रथम वर्षमें २५ श्राविकायें थीं तो आज तो करीब १०० श्राविकायें इस २० रु० श्राविकाश्रम (बम्बई) का लाभ ले रही हैं।

श्री ललिताव्हेनने आश्रममें प्रवेश कर दो कार्य किये—खुद पढती भी थीं और आश्रमका संचालन भी श्री मगनव्हेनके साथ करती थीं और श्रीमती मगनव्हेनके स्वर्गवासके बाद तो आप अकेलेने इस श्राविकाश्रमका संचालन करीब ३९ वर्ष तक किया था।

श्री ललिताव्हेनने इस श्राविकाश्रमकी सेवा बाहर गाम प्रचारार्थ घूम करके भी की, व स्थान-स्थानसे चंदा लाती थीं तथा अनेक गरीब जैन विधवाओंको आश्रममें विना खर्च लिए प्रविष्ट कराती थीं। आप रातदिन आश्रमकी सब प्रकारकी सेवा करती थीं, व साथ२ श्राविकाओंको धर्म व संस्कृतकी शिक्षा भी देती थीं। क्योंकि आपने सर्वार्थसिद्धि तकका ज्ञान इस आश्रमसे ही प्राप्त कर लिया था।

आप नित्य नियमित व्यायाम करती थी व श्राविकाओंसे भी कराती थीं। आपको मुंह साफ करनेका इतना अभ्यास हो गया था कि एक मोटा डोरा नाकमें डालकर उसको गला-

द्वारा मुंहसे निकल सकती थीं। यह आपका अजबका व्यायाम था।

अंकलेश्वर और गुजरातकी कई सधवा, विधवा, कुमारी जैन बहेनोंको आपने आश्रममें तैयार कर दी थीं जो आज आपको याद करती हैं।

आप भारत० दि० जैन महिला परिषद्‌के अधिवेशनमें देहली गई थीं, तब वहां आपको "जैन महिलारत्न" की पदवी दी गई थीं। आपने कारंजा जाकर भ० वीरसेन स्वामीसे समयसार ग्रन्थरत्नका स्वाध्याय किया था। सारांश कि आप एक सेवाभावी बड़ी पंडिता हो गई थीं, और आपने अपना सारा जीवन इस श्राविकाश्रमको अर्पण कर दिया था। बड़ी भारी सेवाके बाद आपका स्वर्गवास सन् ६-६-१९४६ में ७७ वर्षकी आयुमें अंकलेश्वरमें हो गया था तब इस आश्रमको आप जैसी सेवाभावी सचालिकाकी महान कमी पड़ी गई थीं।

आपके बाद श्रीमती कोकिलबाई तथा बादमें श्रीमती चलंत्री-बाई आश्रमका सचालन योग्यतासे करती हैं।

जैन महिलारत्न श्रीमती ललिताबहेनके स्वर्गवासके बाद श्राविकाश्रममें एक शोकसभा ता० ५-१० ४७ को श्री सौ० कमलावती ध० प० साहू श्रेयांसप्रसादजीके सभापतित्वमें हुई थीं। उसमें आपका स्मारक करनेको जो स्मारक फंड हुआ था, उसमें करीब ८०००) भरे गये थे जिसकी आयमेंसे आपके नामपर आश्रममें औद्योगिक विभाग खोलनेको तथा योग्य बहेनोंको छात्रवृत्ति देनेका तथा आपके स्मरणार्थ एक ग्रन्थ छपाकर वह 'जैन महिलादर्श' के ग्राहकोंको भेंट देनेका विचार हुआ था। क्योंकि आप 'जैन महिलादर्श' मासिककी सहायक सम्पादिका भी थी, व इस समय सेठ छोटालाल घेलाभाई गांधीने कहा था कि मैं 'आत्मपुरुषार्थ' नामक ग्रन्थ तैयार कर दूंगा व कापड़ियाजी

उसे छपाकर भेंट देनेकी व्यवस्था करेंगे लेकिन कइ वर्ष बीत गये तौ भी श्री छोटुभाई यह ग्रंथ तैयार न कर सके व आप स्वर्गवासी भी हो गये तब हमने विचार किया कि श्री ललिताबहेनके स्मरणार्थ कोई ग्रन्थ प्रकट करके भेंटमें बटवाना ही चाहिये अतः हमने कुछ समयके बाद श्री ब्र० प० चन्दाबाईजी आरा (संपादिका, जैन महिलादर्श) द्वारा संग्रहीत यह उपयोगी पुस्तक—'कहानी संग्रह भाग तीसरा' छपाकर तैयार किया और आज यह 'जैन महिलादर्श' के ४४ वें वर्षके ग्राहकोंको भेंट स्वरूप बांटा जा रहा है तथा आश्रमकी बाहर बहेनों तथा स्मारक फण्डके दानियोंको भी यह पुस्तक भेंटमें बांटी जायगी।

श्राविकाश्रमके वर्तमान मंत्री सेठ धनकुमार ठाकोरदास जौहरीने श्री ललित बहेन स्मारक फण्डसे इस ग्रंथको प्रकट करानेकी व्यवस्था कर दी इसके लिये हम व दर्शके ग्राहक आपके आभारी हैं।

वीर सं० २४९२
फाल्गुन सुदी ९
ता० १-३-६६.

मूलचंद किसनदास कापडिया
प्रकाशक, जैन महिलादर्श-सूरत।

* कहानियोंकी नाम सूची *

(१)

लक्ष्मी

गंगाराम ब्राह्मणको रुक्मिणी और लक्ष्मी मात्र दो ही कन्याएँ थीं। इनकी माताका देहान्त हो गया था। गंगारामकी जमीनकी आजीविका कुछ रामपुर गांवमें थी। दोनों कन्याओंका लालन-पालन बड़ी सावधानीसे हुआ था लेकिन उन्हे किसी तरहकी शिक्षा नहीं दी गई। संसारके लौकिक अनुभवसे विल्कुल शून्य थी।

रुक्मणीका विवाह ग्यारह वर्षकी अवस्था में विश्वनाथ नामके व्यक्तिसे करदिया गया। उसने अपनी समस्त संपत्ति मुकदमों मे खो दी थी। अपनी सारी संपत्तिसे हाथ धोनेके पश्चात् ससुरके कहनेसे ससुरालमें ही रहनेको राजी हो गया।

रुक्मिणीको संतान होनेके पहले ही गंगारामका स्वर्गवास हो गया। विश्वनाथ सोचने लगे, 'कैसे दुःखकी बात है कि मेरे

पुत्र होनेसे पहले ही ससुरजीकी मृत्यु हो गई है, नहीं तो वे मेरे लड़केको गोद ले लेते और सारी जायदादका मालिक हो जाता। अब तो मुझे आधी ही संपत्तिसे सन्तोष करना पड़ेगा। और आधी तो लक्ष्मीको मिल जायगी। मेरी स्त्रीका आधा हिस्सा तो मेरे कर्जके उतारनेमें ही शेष हो जायगा।

मैं भिखारी हो जाऊंगा और मेरा जीवन इस पृथ्वी पर नरकतुल्य हो जायगा। खैर, अब फैले हुए दूध पर पश्चात्ताप करनेसे क्या लाभ है। बुद्धिमान मनुष्य भविष्यकी खोजमें ही अपना पूर्ण योग लगाते हैं। बीती हुई बात पर पछताना मूर्खता है। मैं अब लक्ष्मीका विवाह शीघ्र न करने दूंगा। विवाह न होगा तब तक समस्त आजीविकाका उपभोग स्वयं मैं ही करूंगा। ईश्वर! तुझे धन्यवाद है कि वह सिर्फ सात ही वर्षकी है और मैं ही उसका रक्षक हूं।

गंगारामकी मृत्युके एक वर्ष बाद ही रुक्मणीको एक हृष्ट-पुष्ट सुन्दर लड़का उत्पन्न हुआ। विश्वनाथने कहा—"ससुरजीके एक वर्ष बाद ही लडका हो गया। क्या ही अच्छा होता यदि उनके सामने होता। भाग्य मेरे प्रतिकूल हो रहे हैं। तीन चार वर्षोंमें ही तीन सन्तानें उत्पन्न हुयीं। एक पुत्र व तीन पुत्रियोंके भारसे विश्वनाथ अपनेको बड़ा ही भाग्यशील समझने लगा।

विश्वनाथ सोचने लगा—पहले दुर्भिक्ष, फिर बाढ़ दोनों ही मेरे सर्वनाशका कारण हैं। विश्वनाथ इतने सोच-विचार

पर भी अपनी सन्तानोंको हृदयसे प्रेम करने लगा। रुक्मिणी और लक्ष्मी बालकोंके लालन-पालनमें लगी रहती थीं।

गंगारामकी मृत्युको चार वर्ष व्यतीत हो चुके थे। विश्वनाथ बराबर मुकद्मेबाजीके झगड़ोंमें लगे रहनेसे अधिक खर्चसे दबे जाते थे। इस समय कर्जदारोंने यह सोचकर कि लक्ष्मीके विवाहका समय निकट आ रहा है और विश्वनाथका अपना धन केवल कर्ज चुकाने मात्रको ही है, उस पर नालिश कर दी। कोर्टसे विश्वनाथ पर मय खर्चके सब रुपयोंकी डिग्री हो गई। यदि रुपये समय पर न दे सके तो जेलजानेकी आज्ञा दी गई।

विश्वनाथ अमीनकी कुर्की आनेपर बहुत रोया, पश्चात्ताप करने लगा। कर्जदारोंके अनुमानके अनुसार रुक्मिणीने अपने हिस्सेकी जमीनको बेचकर कर्जदारोंको रुपया दे दिया। और विश्वनाथ जेल जानेसे बच गया। विश्वनाथ और रुक्मिणीके पास लक्ष्मीकी जमीनके सिवाय और कोई दूसरा साधन-निर्वाहका नहीं था। यह भी जबतक लक्ष्मीका विवाह न हो तबतकका सहारा मात्र था।

इसके पश्चात् उससे भी हाथ धो बैठनेका ही डर लग रहा था। अब विश्वानाथने चाहा कि अपने कर्जदारोंपर जेल करानेके अभियोगमें मान-हानिका मुकद्मा करके कुछ रुपया झटकूँ। परन्तु रुक्मिणीके बहुत समझानेपर उसको विवश होकर रुकना पड़ा। रुक्मिणी विश्वनाथकी विचित्र बातोंपर

बड़ी दुःखी होती थी। फिर हृदयको सान्त्वना देकर धैर्यका अवलम्बन करती हुई समय निकालती थी।

दूसरे दिन संध्याके समय रुक्मिणीके पास उत्तेजित होकर विश्वनाथ दौड़े आये।

प्रिये! एक बड़ा विचित्र विचार मेरे हृदयमें आया है। यदि तुम भी उससे सहमत हो तो सरलतासे हमारा संकट दूर हो सकता है। बालकोंके पालन-पोषणके लिए तथा हम लोगोंके निर्वाहका मार्ग सुगमतासे निकल सकता है। रुक्मिणीके नेत्र हर्षसे चमकने लगे। उत्कंठित हो रुक्मिणीने पूछा—क्या, आपको कोई कार्य मिल गया है?

ओह! क्या तुम नहीं जानती कि मैं अपने दुर्बल शरीरके कारण कार्यके अयोग्य हूं। रुक्मिणी—तब कौनसी आपकी नई विचारधारा है, जिससे कि हमलोगोंका पालन हो सकता है।

लक्ष्मीका पुनः विवाह मैं अपने साथ कर लूं तो उसकी आमदसे हमलोगोंका आनंदसे निर्वाह हो सकता है। क्रोधसे रुक्मिणीने कहा—"क्या पागल हो गये हो? क्या मेरे जीवनका सर्वनाश करके भी तुम्हारा मन शांत नहीं हो सका कि एक बिचारी अबोध बालिकाको फाँस कर उसका जीवन नष्ट करनेकी सोच रहे हो। मेरी बहनका कभी अपने साथ विवाह नहीं कर सकते।"

बहुत अच्छा, तब भूखों मरनेको तैयार हो जाओ। तब

लक्ष्मीका दूसरे किसीके साथ विवाह हो जायगा तो सब आय उसीकी हो जायगी ओर हम लोग निर्धन होकर बैठे रहेंगे।

रुक्मिणी—तुमको कोई कार्य करके द्रव्य उपार्जन करना चाहिए। मैं भी स्वयं कुछ कार्य करूंगी। जैसे—दूध, मिठाई आदिका बैचना। हम दोनों इतना कर सकते हैं कि बालकोंका पालन भली-भांति हो जाय।

विश्वनाथ—मैं कुछ भी उपार्जन नहीं कर सकता और न करूंगा क्योंकि मैंने कभी कोई कार्य नहीं किया है।

रुक्मिणी—अब भी आप अपनेको पुरुष कहने लायक समझते हैं?

विश्वनाथ—मैं नहीं कहता, परन्तु प्रकृतिसे मैं पुरुष बनाया गया हूँ। मैं नही कह सकता कि मै पुरुष कहने योग्य हूं या नहीं।

रुक्मिणी—जो कुछ आप कहते हैं सब ठीक है किंतु मेरी बहनके साथ विवाह करनेके घृणित विचारको मदाके लिए त्याग करना होगा। कोई आदरणीय दूसरी आजीविका होनेका उपाय आपको सोचना चाहिए।

विश्वनाथ—एक बात सिर्फ कहता हूं—आपका समस्त स्वार्थ त्याग जोकि अपनी जमीन बेच कर्ज चुकाकर किया है निष्फल जायगा, यदि लक्ष्मीका विवाह दूसरेके साथ हो जायेगा क्योंकि तब मैं जेल भेज दिया जाऊंगा।

रुक्मिणी—यह कैसे हो सकता है ?

विश्वनाथ—उसका पति मेरे ऊपर नालिश दायर कर सकता है कि मैंने लक्ष्मीकी नाबालगीमें उसकी जमीनकी आजीविका लगभग रु० पांच हजार अपने कार्योंमें लगा ली है।

रुक्मिणी—निश्चयसे लक्ष्मी उन्हें कभी ऐसा न करने देगी।

विश्वनाथ—निःसंदेह वह करने देगी। जब वह हम लोगोंसे अलग हो जायगी तो निश्चयसे वह अपने पति और अपने द्रव्यका ही भला सोचेगी। यदि वह न भी करेगी तो उसका पति उसे ऐसा करनेके लिए बाध्य करेगा।

रुक्मिणी—हां, मैंने इस विषयको पहले नहीं सोचा था। यदि हम लक्ष्मीसे एक कागज लिखा कर विवाहके पहले ले लें कि उसकी संपत्तिसे वह रुपया द्रव्य उसने इनको दे दिया तो क्या नहीं बच सकते ?

विश्वनाथ—वह तो सर्वथा अनुचित होगा, क्यों कि नाबालिगकी लिखा–पढी सत्य प्रमाणित नहीं हो सकती जब कि हमलोग ही उसके संरक्षक हैं। मैं तुमसे कहता हूं कि हमलोगोंके बचावका एकमात्र उपाय यह है कि लक्ष्मीका विवाह मेरे साथ कर दिया जाय।

मैं नहीं समझता कि इससे तुमको क्या आपत्ति है ? मैं यह नहीं कहता कि तुम्हारे विचार दो विवाह करनेके सिद्धान्तके

विरुद्ध हैं। किन्तु यह नहीं समझता कि तुम कैसे इस बिचारी कन्याकी किसी अनजान व्यक्तिका मुखग्रास बनाकर सर्व नाश करना चाहती हो। वह इसके धनके लोभसे इसे मार भी सकता है।

यदि किसी दूसरेके साथ विवाह कर दोगी तो लक्ष्मीको देखना भी दुर्लभ हो जायगा। यदि मेरे साथ होगा तो वह तुम्हारे साथ ही रहेगी।

रुक्मिणी तनिक हिचकी, विश्वनाथकी चालबाजीके प्रयोगसे उसकी दृढता भंग होने लगी।

विश्वनाथ—लक्ष्मीको लेनेमें ही हम सबका कल्याण है।

रुक्मिणी—यदि लक्ष्मी स्वयं इस प्रस्तावसे सहमत है तो मैं बीचमें आक्षेप न करूँगी।

विश्वनाथ—बहुत अच्छा, लक्ष्मीसे पूछा जायगा। बिचारी लड़की इस विषयको क्या जान सकती है। हम लोग संरक्षक हैं। हमलोग उसके भलेका ही उद्योग कर सकते हैं। हम लोगोंके विवाहके समय हमलोगोंकी संपत्ति किसने ली थी? तब भी विवाह एक प्रसन्नताका सूचक ही रहा, कोई बुराई नहीं निकली। रुक्मिणीको व्यर्थकी बातें करते करते जम्हाई आने लगी। मैं कहता हूं कि लक्ष्मीसे सलाह करनेकी आवश्यकता नहीं है। इससे संभवतः वह डरने लगे।

रुक्मिणी—जैसी इच्छा हो करो, मैं एक बात होनेसे विवाह होनेमें सहमत हो सकती हूं कि यदि तुम बिना मेरी

सम्मति लिए हुए मुकदमेंबाजीके झगड़े करना एकदम बन्द कर दो। लड़कीका रुपया किसी प्रकार कचहरी और वकीलोंसे तो बच जाय।

विश्वनाथ—यह तो बिल्कुल एक विचारनेके योग्य बात ही नहीं है। इस विषयको तुम क्या जानती हो कि कौनसा मुकदमा करना चाहिए और कौनसा नहीं? तुम कोर्टके मामलोंको क्या समझ सकती हो, क्या तुम जज हो?

रुक्मिणी—मैं कचहरी और वकीलोंकी सब चालबाजियोंको खूब जानती हूँ। तुमको इसकी प्रतिज्ञा करनी होगी, नहीं तो मैं अपनी संमति नहीं दूँगी।

विश्वनाथ—मैं तुम्हारी इस बातको व्यर्थ जानते हुए भी शांति और लक्ष्मीकी भलाईके लिए नियम करता हूं कि तुम्हारी अनुमति लिए विना मैं कचहरीके कार्योंमें हाथ   गाऊंगा।

लक्ष्मीके मामाके लड़केके पास यह समाचार भेजा गया कि विश्वनाथके साथ लक्ष्मीका विवाह संस्कार वह करा जाय। लक्ष्मीका ममेरा भाई एक चालाक मनुष्य था। वह विश्वनाथ रुक्मिणीके प्रस्तावका समर्थन शीघ्र करनेवाला नहीं था। उसने कहा कि लक्ष्मीके द्रव्यके हड़पनेके लिए यह षड्यंत्र विश्वनाथने रचा है।

उसने विश्वनाथको उत्तरमें लिखा कि यदि लक्ष्मीकी जायदादमेंसे आधी उसीके नामपर कर दी जायगी तो मैं विवाह पर सम्मिलित हो जाऊंगा अन्यथा नहीं।

विश्वनाथ और रुक्मिणी इस बातको सुनकर बहुत घबराये। सोचा, भाईको एक पैसा भी न दिया जाय और उसकी अनुपस्थितिमें ही विवाह कर लिया जाय। भाईने और भी कम रुपया मांगा किंतु वह भी मना कर दिया गया। उसका मार्गव्यय तथा भोजन देनेसे भी विश्वनाथने इन्कार कर दिया। दोनोंमें मतभेद हो गया।

विश्वनाथके विरुद्धमे खूब हलचल मची। सब लोग विवाहके विपक्षमें हो गए। इन लोगोंने अपने गांवमें विवाह असंभव होना जानकर विचार किया कि रामेश्वर तीर्थयात्राके बहानेसे जाकर विवाह कर लिया जाय। बच्चों सहित विश्वनाथ, लक्ष्मी और रुक्मिणी रामेश्वरको चल पडे। लक्ष्मीसे कहा गया कि सब लोग यात्रा करने जा रहे हैं यह जानकर लक्ष्मीको प्रसन्नता हुई।

रामेश्वर जाकर विश्वनाथ एक शास्त्रीसे मिले और अपना मन्तव्य कह सुनाया। उसने कहा कि विवाह उसी दिन होना चाहिए। पुरोहितने विश्वनाथकी दो पत्नीका विवाह तथा उसका कुछ लाभ इसमें समझा कर पचास रुपया विवाह दक्षिणा मांगी बजाय सामान्य दस रुपयाके।

विश्वनाथ—मै दूसरा पुरोहित ढूंढ लूंगा।

पुरोहित—मैं सबको रोक सकता हूं। पुलिसको खबर दे सकता हूं कि यह विवाह सन्देहजनक है।

विश्वनाथ—हमलोग क्या कचहरी कर रहे हैं? तुम यह कैसे हिम्मत करके कह सकते हो कि विवाह संदेहजनक है?

पुरोहित—आप नाराज न होइयेगा, लड़कीका अपना परिवार कौनसा है जो उसका पाणिग्रहण करायेगा। हम लोगोंका यह व्यवसाय है, आप धोखा नहीं दे सकते। सिर्फ यही डर है कि लड़कीका ममेरा भाई न आ जाय। यह पुरोहित भी बुड्ढे चालाक होते हैं, इसलिए विश्वनाथ पचास रुपया ही देनेको तैयार हो गए। पुरोहित स्वीकारिता मिलने पर मुस्कुराता हुआ चल दिया।

दूसरे दिन विवाह होनेके ३-४ घंटे पहले रुक्मिणीने लक्ष्मीसे उसके विवाहके विषयमें कहा।

लक्ष्मी—बहन, आप क्या कहती हैं? क्या मेरा विवाह मेरे जीजाजीके साथ करोगी? कैसी असभ्य बुरी बात आप कह रही हैं?

रुक्मिणी—क्या कावेरीका उसके जीजाजीके साथ विवाह नहीं हुआ है?

लक्ष्मी—हां, किन्तु उसकी बहनकी मृत्यु हो गई थी।

रुक्मिणी—मैं भी चाहती हूं कि मैं भी मर गई होती तो अच्छा था।

लक्ष्मी—ऐसा न कहो, यह कहिये कि आप मेरा इनके साथ विवाह क्यों करना चाहती हैं?

रुक्मिणी—हम लोगोंके पास धन नहीं है, तुम्हारी जमीनसे जो कुछ आता है उसीसे बाल-बच्चों सहित हमलोगोंकी गुजर होती है।

लक्ष्मी—आप और जो भी आज्ञा दें मैं माननेके लिए तैयार हूं। उनकी स्त्री (आप) जीवित हैं, चार बच्चे है तथा बहनोईकी अवस्था भी अधिक हो चली है। बहन! मैं आपसे वचन देती हूं कि मैं आजन्म अविवाहित रहनेको सहर्ष स्वीकार करती हूं। आप इसी तरह मेरी जायदादसे जो भी लाभ चाहें उठा सकती हैं।

रुक्मिणी—लक्ष्मीको हृदयसे लगाती हुइ बोली-मेरी प्यारी बहन! मैं बड़ी भाग्यहीन और दुष्ट स्त्री हूँ। मेरी कुबुद्धि न जाने क्या क्या कर रही है।

मैं तुम्हारे इस बड़े त्यागसे सहमत नहीं हो सकती। मुझे लज्जा है कि ऐसा प्रसंग मैंने क्यों छेड़ दिया? तुम बिना विवाहके ही लौट सकती हो। फिर मैं उस पुरोहितके लोभ-पूर्ण व्यवहारपर हर्ष मनाऊंगी जब कि उसका स्वार्थ साधन न हो सकेगा। समय आनेपर तुम किसी सुयोग्य शिक्षित पुरुषसे विवाह कर सकोगी।

लक्ष्मी—मैं आजन्म अविवाहित क्यों नही रह सकती?

रुक्मिणी—हम लोगोंकी सामाजिक प्रथाके अनुकूल

हरएक स्त्री-पुरुषका विवाह होना आवश्यक है। यद्यपि मैं कभी न समझ सकी कि क्यों ऐसा कहा जाता है कि किसीके विवाहके पश्चात् पति, स्त्री और संतानका पालन करता है। यद्यपि इसके विरुद्ध मेरे पति मेरी और मेरी बहनकी संपत्तिसे अपना पालन करते हैं। दुर्भाग्यसे ऐसे पति मिले हैं कि स्त्री पर्याय बड़ी निन्दनीय लगती है।

यदि हम दोनों बहनें पुरुष होती तो अविवाहित रह सकती थीं, इच्छित स्थानोंमें आ जा सकती थीं यानी स्वतन्त्र जीवन व्यतीत कर सकती थीं। इस स्त्री जीवनमें सब असंभव है। इसी समय विश्वनाथ आये। रुक्मिणी बोली—लक्ष्मी बिल्कुल राजी नहीं है, अपने विवाहके विचारको छोड़ दो।

विश्वनाथ—ऐसी मूर्खता न करो, अब समय कहां है कि विचार बदला जाय। मैं तो पचीस रुपया पुरोहितको दे चुका हूं और विवाहकी सामग्रीके लिए भी पचीस दे चुका हूं। यह सब कर्ज लेकर दिया गया है। अतः विवाह करनेके सिवाय और कोई दूसरा उपाय नहीं है। यदि ऐसा न हुआ तो रुपये व्यर्थ जायंगे और इज्जत भी खत्म होगी।

रुक्मिणी दुःखसे भर गई और कहने लगी—मैं ही इस महापापका कारण हूं। यदि मैं प्रथम दिन ही तुम्हारी बातका कड़ाईसे आक्षेप करती तो आज यह दुर्दिन नहीं आता।

विश्वनाथ—अपना दोष रुक्मिणी पर चढ़नेके ख्यालसे बोले—हां निश्चय न होता।

मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है, ऐसा कहते हुए रुक्मिणी चिन्तासे दुःखी होकर जमीन पर गिर पड़ी। विश्वनाथने रुक्मिणीको शीघ्रतासे उठाया, पलंग पर सुलाकर लक्ष्मीसे बोला कि यह सब इसकी दशा तुम्हारे आज्ञा न माननेसे हुई है। यदि तुम इसको अच्छा करना चाहती हो तो मेरे साथ झुठा दिखावटी विवाह कर लो, ऐसा करनेसे पुरोहित भी कोई नई आपत्ति नहीं उठा सकता।

लक्ष्मी—क्या यह झूठा विवाह होगा? असली मेरा पीछे होगा? और नहीं तो क्या? विश्वनाथने उत्तर दिया क्या अपनी स्त्रीके रहते हुए मैं दूसरा विवाह कर सकता हूँ? यह सब रुक्मिणीने तुमसे प्रेमका परिचय लेनेका ढंग निकाला है।

लक्ष्मीने पूछा—तब असली मेरा विवाह आप पीछे करेंगे?

निश्चयसे! विश्वनाथने उत्तर दिया—अच्छा तब मेरे साथ चलो, दिखावती विवाह कर डालें। यह निश्चय है न कि यह दिखावटी विवाह होगा। यदि यह असली विवाह होता तो हमारे गाँवमें हजारों मनुष्योंके सामने होता, जिसमें तुम्हारे मामाके यहांसे भी लोग आते।

तुम कैसी मूर्ख हो लक्ष्मी! ऐसा कहकर विश्वनाथ हँस पड़े।

विचारी बारह वर्षकी लड़की विश्वनाथके साथ धोखेमें आकर चल पड़ी, जहां कि पुरोहितने विवाहकी तैयारी की थी। विश्वनाथने लक्ष्मीसे कहा कि वह पुरोहितसे न कहे कि विवाह झूठा है। क्योंकि नहीं तो पुरोहित क्रोधित हो जायगा।

यह सुनकर लक्ष्मीको संदेह हुआ, और सोचा कुछ विचारसे काम लेना चाहिए। ऐसा न हो कि जीजाजी मेरे साथ झूठा व्यवहार करते हो। सुना है कि स्त्रीका एक ही विवाह होता है फिर असली और नकली विवाह कैसा ? वहां जाकर एक आवश्यक वस्तुकी कमी पाई गई।

विश्वनाथको तो जल्दी पड़ी थी कि कहीं पुरोहितको आनेमें देर न लगे। वे बोले—मैं अभी दौड़कर आध घंटेमें आता हूँ। लक्ष्मीको बैठाकर बाजार चल पडे। लक्ष्मीने अपने भाग्यको सराहते हुये पुरोहितसे पूछा कि महाशय, स्त्रियोंके क्या असली और नकली दो विवाह होते हैं ?

पुरोहितने चौंककर कहा—क्या कहा ? मनुष्यका विवाह–बंधन तो असली एकबार ही होता है। शास्त्रोंमें नकली विवाह कहीं नहीं मिलता।

लक्ष्मीने पुरोहितके कुछ आश्वासनके वचन सुनकर आदिसे अंततक कथा कह सुनाई। विश्वनाथके नीच विचारोंको बतलाते हुए अपनी रक्षाके लिए कोई शीघ्र मार्ग बतानेकी

याचना की। पुरोहित विद्वान और वयोवृद्ध होनेके कारण विश्वनाथके असली मन्तव्यको समझ गये।

उन्होंने लक्ष्मीको सान्त्वना देते हुये कहा कि वह उसको घरमें छिपा लेगा और उसके लौट जानेके पश्चात् लक्ष्मीको मामाके यहां पहुंचा देगा। और किया भी ऐसा ही गया। बाजारसे लौटने पर लक्ष्मी और पुरोहित दोनोंको ही विश्वनाथने वहां न पाया। बहुत खोज की, रोया लेकिन विदेशमें कोई बस न चला। हार कर सब लोग घर लौट आये। लेकिन लक्ष्मीका पता न लगा।

लक्ष्मी अपने मामाके घर आ गई। वहां उसने सारी कथा कह सुनाई और लिखने पढ़नेका अभ्यास करने लगी। सब लोग लक्ष्मीकी चतुराई और साहसकी प्रशंसा करने लगे।

कुछ दिनोंके पश्चात् विश्वनाथको पता चला कि लक्ष्मी अभी जीवित है तथा अपने किसी परिवारमें आ गई है। विश्वनाथको सन्देह था कि रुक्मिणीने ही लक्ष्मीको भगा दिया है अतः बतानेके लिए बाध्य करने लगे। रुक्मिणी बेचारी क्या जानती थी अतः न बता सकी कि कहां और किस हालतमें है। विश्वनाथ क्रोधित हो मारने लगे—दुष्टा, या तो तुम बता दो अन्यथा मार डालूंगा।

रुक्मिणी—मार डालो, ऐसे जीवनसे मृत्यु ही अच्छी है।

विश्वनाथ—क्या तू मुझे धोखा देना चाहती है? क्या

मैं तेरे लिए पृथ्वी पर ईश्वर तुल्य नहीं हूं।

रुक्मिणी—ऐसे पति तो राक्षस सदृश हैं। अब हम लोगोंका सर्वनाश हो जायगा। हमलोगोंका सत्यनाश अबोध बालिकाके सर्वनाशकी अपेक्षा कहीं श्रेष्ठ होगा।

विश्वनाथ—अब मुझे निश्चयसे कैदकी सजा होगी।

रुक्मिणी—आपके पक्षमें सजा होना ही अच्छा होगा।

इस पर विश्वनाथने रुक्मणीको और पीटा।

रुक्मिणी—खूब मारो ताकी प्राण निकल जाँय, और तुम स्वतंत्र हो जाओ।

विश्वनाथके बालकोंने यह दृश्य देखकर घरसे बाहर होकर चिल्लाना शुरू कर दिया कि, 'माताजीको पिताजी मार डालेंगे।' सुनकर पड़ोसी दौड़ आये और उन्होंने छुड़ाया।

रुक्मिणीने कहा—विश्वनाथका दिमाग ठीक नहीं है, पागल हो गया है, कहता है कि लक्ष्मीके साथ मेरा विवाह हो गया है।

विश्वनाथ—मैं पागल नहीं हूं, मैंने उसके साथ विवाह किया है। निश्चयसे पुरोहित भी रामेश्वरमें साक्षी है। मैं कल ही इसे साबित कर सकता हूँ।

रुक्मिणी—पंड़ितको मरे भी दो वर्ष हो गए हैं, अब साक्षी कौन होगा? लक्ष्मीके खो जानेसे इनका माथा बिगड़ गया है, इसीसे ऐसी झूठी कल्पनाएं कर कह रहें हैं। मेरे विवाहित जीवनमें आज पहलीबार ऐसा मारा है।

विश्वनाथ—तुम्हारे सिवा उसे भगानेवाला दूसरा कोई नहीं मैं तुम्हारे विरुद्ध केस दायर करूंगा कि लडकीको भगा दिया है। पडोसके एक समझदार व्यक्तिने कहा कि अभी उसे अकेले छोड़ दिया जाय, थोड़ी देरमें वह खुद ही शान्त हो जायगा।

विश्वनाथके कर्जदारोंने सुना कि लक्ष्मी चली गई है उसकी संपत्ति पर अब इसका कोई हक नहीं है तो अपने अपने रुपये पानेकी चिन्तासे सभी विश्वनाथके दरवाजे पर आ खडे हुए। और रुपये न मिलने पर जेलयात्रा करवा दी। विश्वनाथने सोचा था कि लक्ष्मीकी संपत्तिसे थोड़ी बहुत देकर रुक्मिणी उसे जरूर बचा लेगी, लेकिन उसने विश्वनाथकी एक न सुनी और बोली--ऐसे मनुष्योंके लिए दंड मिलना ही अच्छा है। तभी हर तरहका छल कपट छूटेगा। इनकी अनुपस्थितिमें मैं मिठाई और दूध बेचनेका काम अच्छी तरह कर सकूंगी। छः महीने तक विश्वनाथ जेल रहे। जब कर्जदारोंने देखा कि कुछ न बन सकेगा तो उन्होंने विश्वनाथको छुटा दिया। इतने दिन जेल रहनेके पश्चात् भी विश्वनाथ ठन्डे नहीं हुए। घर आते ही रुक्मिणीपर झपटे। लेकिन पुलिसने तुरन्त आकर पकड़ लिया।

वि०—मेरे मकानसे मुझे क्यों निकाला जा रहा है?

पुलिस मैन०—यह तुम्हारा नहीं वरन् लक्ष्मी और रुक्मिणीका है। ऐ, शैतान! तेरा मकान कौनसा है? विश्वनाथको क्रोधसे सरमें चक्कर आने लगे। संध्या तक बिना

कामके इधर-उधर घूमते रहे। ठण्डी हवा लगनेसे उसका सिर कुछ शांत हुआ। अब भूख और अन्धकारसे व्याकुल होने लगा। अब वह भोजन कहां करे ? अब जेल भी उसके लिए बन्द हो गई। उसने रुक्मिणीसे क्षमा मांगकर संधि करनेका निश्चय किया। प्रातःकाल वह घरके द्वारपर गया और कहने लगा—

प्रिये ! मेरे ऊपर अब दया करो, मुझे घरमें आने दो। मेरे नीच विचारोंके लिए क्षमा कर दो। मेरे सरसे अब वह शैतान भाग गया है। मैं अब शांति और मनुष्यतासे रहनेका वचन देता हूं। मैं सबके सामने कहनेको तैयार हूं कि लक्ष्मीका विवाह मेरे साथ नहीं हुआ है। मैं अपने अपराधोंके संशोधनमें सब प्रकारकी सेवा करनेको उपस्थित हूं। तुम्हारी दी गई मिठाई दूध आदि बिना खाये हुए बेचूंगा जिससे घरकी दशामें उन्नति होगी।

रुक्मिणी—अच्छा मैं एकबार पुनः आपको संभालनेका समय देती हूं। विश्वनाथ घरमें आ गए। रुक्मिणीने आदरसे अच्छा भोजन कराया। इस घटनाके पश्चात् ३ महीने तक विश्वनाथने बड़ी सत्यता और शांतिसे समस्त कार्य किये। दूध इत्यादिके व्यवसायमें अधिक योग देनेसे उन्नति हुई। घरकी दशा सुधरने लगी। तीन माह बाद विश्वनाथने पूछा लक्ष्मी कहाँ है ? मैं हृदयसे कहता हूं, उसे कभी न सताऊँगा। मैंने घृणापूर्ण व्यवहारके लिए पश्चात्ताप किया है।

रुक्मिणी—वह अपनी नानीके यहां है। गत मासमें उसका विवाह एक प्रसिद्ध धनाढ्य वकीलके साथ हुआ है। मैंने उसे कल बुलाया है। दूसरे दिन लक्ष्मी और उसके पति रघु-नंदनप्रसाद रुक्मिणीके घर आये।

रघुनंदन—क्या आपके सिरकी दशा अब सुधर गयी है? विश्वनाथ बिल्कुल, धन्यवाद है।

विश्वनाथने कहा—मेरी स्त्रीने मुझे अच्छा कर लिया है। रुक्मिणीकी तरफ फिरते हुए रघुनंदनप्रसादने कहा, 'मैं अपनी संपत्तिसे अपना खर्च भली प्रकार चला सकता हूं। मुझे मेरी स्त्रीके द्रव्यकी आवश्यकता नहीं है। अब मेरी स्त्री बालिग है, वह अपने पिताकी दी हुई संपत्तिको सहर्ष आपको दे सकती है। यह लीजिये कागज, कहते हुए रुक्मिणीको दे दिया। समस्त परिवारमें लक्ष्मीके ऊपर कृतज्ञताके भाव जाग उठे।

रुक्मिणी—अब मिठाई, घी और दूधका व्यापार बन्द कर दिया जायगा। जो कुछ आजकी बिक्रीके लिए मिठाई आदि बनाई थी सबको खानी चाहिए। जब सभी आनंदसे भोजन कर रहे थे तो रुक्मिणीने लक्ष्मीसे कहा—बहन! आप ही सत्य निकलीं। भाग्यको अच्छा-बुरा बनाना अपना ही कार्य है। (अंग्रेजीकी कहानीके आधार पर)

लेखिका-श्रीमती व्रजबालादेवी जैन-आरा।
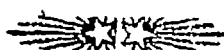
(२)

गुजराती जैन सती मंडलसे अनुवादित—

भानुमती

अनुवादिका— उपसंपादिका

यह सती श्रीनगरके प्रजापाल राजाकी पुत्री थी, जै
मुनी मण्डलमें प्रसिद्ध कालिकाचार्यकी बहन होती थी। रा
प्रजापालने भानुमतिको अच्छा शिक्षण दिया था। भानुमा
जब योग्य वयकी हुई तबसे उसको एक सुबोधक पाठशाल
रखा गया था। वह बहुत ही तेजस्वी और भव्य बुद्धिशालि
थी। उसका विद्या-गुरु जो शिक्षण एकवार देता था वह उस
हृदयमें अंकित हो जाता था. वह उस शिक्षाको कदापि भूलत
नहीं थी।

पुरपति श्री प्रजापाल राजा जैन धर्मका परम भक्त था
उनकी राजधानीमें जैन प्रजा परम सुखसे निवास करती थी
राजा अति आदरसे साधर्मियोंका वात्सल्य करता था और जै
प्रजाकी धार्मिक तथा सांसारिक उन्नति करनेमें सदा तत्प
रहता था।

एक समय भानुमति उत्तम पुस्तक पढ रही थीं
उनके मुखसे गीर्वाणी भाषाकी मधुर कविता प्रक
हो रही थी, उसे सुनकर राजा प्रजापाल उनके पा

आया। पुत्रीका स्वर माधुर्य सुनकर राजाके हृदयमें वात्सल्य रस उत्पन्न हो आया। पिताको आते हुए देख भानुमतिने लज्जित हो बोलना बंद कर दिया। उन्होंने खड़े होकर पिताको वन्दना की, पिताने प्रेमपूर्वक कहा—

"वत्से! तुम्हारा स्वर माधुर्य सुनकर मेरे हृदयमें अति आनंदकी लहरियाँ उछल रही हैं। तुम क्यों बोलती हुई बंद हो गई? मुझे स्वर माधुर्य पान करने दो।"

पिताके इन वचनोंको सुनकर भानुमती नम्रतासे बोली—पूज्य पिताजी! मेरे स्वर माधुर्यसे उसके भीतर जो अर्थ माधुर्य है, उसका विचार करो। स्वर माधुर्यसे अर्थ माधुर्यकी कीमत बहुत है। हृदयके भावको बहुत उपयोगी है। जो मनुष्य किसी भी काव्य व गाथाके अर्थ माधुर्यको जानता है यानी अर्थका विचार करता है, वह मनुष्य सारग्राही व विवेकी गिना जाता है।

भानुमतीके वचन सुनकर उनके पिता राजा प्रजापाल हृदयमें प्रसन्न हो गए। अपनी पुत्रीके ऐसे विचारोंको देखकर उनकी शिक्षाके लिए पूर्ण इन्तजाम कर दिया। और संतुष्ट होकर प्रेम पूर्वक कहा—'बेटी! तुझमें शिक्षारूप अमृतका सींचन हुआ देखकर मुझे अतिशय आनंद होता है। प्रत्येक सुबोधक काव्यका तथा गाथाका अर्थ माधुर्य ही देखना चाहिए। शब्द माधुर्य उसके समान उपयोगी नहीं है।

सुकंठी मनुष्य मधुर स्वरसे कविता गान करता है, परंतु अगर उसके हृदयमें उसका अर्थ–बोध न हो तो पीछे कंठ माधुर्य किस कामका है ? वत्से ! तूने मुझे सचमुच सच्चा बोध कराया है। मैं प्रथम तेरे कंठ माधुर्यसे ही मुग्ध हुआ था, परंतु जो कविता तेरे कंठ माधुर्यसे प्रकट होती थी उसके अर्थका मैंने विचार ही नहीं किया था। तेरा यह बोध सचमुच मनन करने योग्य है। जो केवल कण्ठ माधुर्यमे कविताको मान देता है वह श्रवणेन्द्रियको तृप्त करनेवाले होनेसे इन्द्रियके विषयोंमें मोहित समझना चाहिये।

ऐसा कहकर भानुमतीको अभिनन्दन देकर राजा प्रजापाल अन्तःपुरमें गया और वहां अपनी रानीके पास पुत्रीकी बुद्धि और सद्विचारकी प्रशंसा करने लगा था। पश्चात् राजाने अपनी रानीको धन्यवाद दिया।

राजा प्रजापालने ऐसे वचनोंका उच्चारण किया—प्रिये ! तुमको मैं धन्यवाद देता हूँ। पुत्री भानुमतीके हृदयमें जो विचार उत्पन्न हो रहा है उसका कारण तुम स्वयं ही हो। सुशिक्षित माताके शिक्षणसे ही पुत्री शिक्षित हुई है। बाला-वस्थामें बालिकाएं जो बोध प्राप्त करती हैं वह बोध अन्य किसीसे नहीं प्राप्त कर सकती। बाल–पुत्रीके शिक्षणका आधार उनकी माता है। सुशिक्षित माता अपनी संतानोंकी आदि गुरु है। माता–रूप गुरुके प्रसादसे संतान–रूप शिष्योंको जो शिक्षा, धर्म और नीति तथा आचारको अनुसरण करके उनको

दी जाती है। वह दूसरी रीतिसे कभी नहीं दी जाती। प्रिये ! तुम्हारा कर्तव्य देखकर मुझे बहुत आनंद होता है।

राजा प्रजापालके शब्दोंके उत्तरमें रानीने कहा कि— "स्वामी ! मैंने अपने कर्तव्यके सिवाय कुछ भी नहीं किया है। प्रत्येक माता जो एक सामान्य गृहिणी हो, उसका कर्तव्य यह है कि अपनी संतानको सुशिक्षित बनावे। जो माता अपनी संतानको शिक्षासे वंचित रखती है यानी उसकी उपेक्षा करके उनको पढाते नहीं वह माता अपने कर्तव्यसे भ्रष्ट हुई जानना चाहिए। इतना ही नहीं वह तो संतानकी अहितकारिणी हैं उनकी शत्रु हैं।

रानीको इस प्रत्युत्तरसे राजाको अवर्णणीय आनंद प्राप्त हुआ और वे प्रसन्न होकर अपने कर्तव्यमें दत्तचित्त हो गए।

प्रिय पाठिका माताओ ! राजा प्रजापाल और उनकी रानीके परस्पर इन वचनोंको तुम अपने हृदयमें स्थापित कर रखना और सदा वैसा ही कर्तव्य निभानेको तत्पर रहना।

सती भानुमतीने अपने माता-पिताके कर्तव्यका फल पूर्ण रीतिसे प्राप्त किया था। अनुक्रमसे वह राजबाला विद्या और वयमें बड़ी हो गई। जब वह योग्य वयस्का हुई तो राजा प्रजापालने भृगुपुर (भरुच)के जितारि नामके राजाके साथ उनकी शादी कर दी। जितारि राजाने बाल्यवयसे ही अच्छी शिक्षा प्राप्त की थी। उनमें धर्म-नीति और सदाचारके पवित्र संस्कार

अच्छी तरहसे आरूढ़ हुए थे। राजा पवित्र भानुमती जैसी शिक्षित रानीको पाकर अपने राज संसारमें देदीप्यमान हुआ।

इधर राजा प्रजापालको कालिक नामका एक पुत्र हुआ था। वह अपनी बहन भानुमतीके साथ ही रहकर एक सुशिक्षित कुमार बन गया था। कालिककुमारको बाल्यकालसे ही वैराग्य भावना उत्पन्न हुई थी। वह एक राज्य विभूतिका भोक्ता था, फिर भी वैराग्यके प्रबल वेगसे उसकी मनोवृत्ति राज्य समृद्धिकी ओर उपेक्षा रखती थी।

बारंबार सांसारिक सर्व पदार्थों में वह अनित्यताका विचार किया करता था। कालिककुमारकी मनोवृत्तिमें विरक्त भाव देखकर उसके पिता प्रजापालने राजकीय विषयोंमें उसको नियुक्त करना प्रारंभ किया था। राजकीय विषयों पर फिर भी उसको प्रीति नहीं हुई। यह सर्व राज्य-समृद्धिसे उपेक्षा रखकर वर्ताव करते थे। वे अपने मनोराज्यमें मग्न होकर आत्मस्वरूपको पहचानकर आनंदमय बन जाते थे।

एक समय भानुमती अपने बंधु कालिककुमारके पास आई, और उन दोनोंमें निम्नलिखित वार्तालाप हुआ—

भानुमती—भाई कालिककुमार आपकी वृत्ति देखकर मुझे निरंतर विचार आया करता है तो आपकी क्या इच्छा है? उसको बतानेकी कृपा कीजिए।

कालिककुमार—प्रिय बहन! मेरे लिए आपको कैसे विचार आते हैं?

भानुमती—आप सदा अपनी समृद्धिसे उपेक्षा क्यों रखते हैं?

कालिककुमार—वह वस्तु अपेक्षा रखने योग्य नहीं है, इसलिए उसके प्रति उपेक्षा रखा हूं।

भानुमति—उसके प्रति उपेक्षा रखनेका क्या कारण है?

कालिक०—जो वस्तु अन्तमें अनित्य और स्थिर रहनेवाली नहीं है, उसकी ओर उपेक्षा रखना ठक है।

भानु०—भाई! कौनसी वस्तु अनित्य और अस्थिर है? उसे समझाओ?

कालिक०—जो वस्तु पुद्गलमय है, वह वस्तु अन्तमें अनित्य और अस्थिर है।

भानु०—इस जगतमें स्थावर और जंगम सब पदार्थ पुद्गलमय ही है। जब सब पदार्थ पुद्गलमय ही है तब कौनसे पदार्थ पर आस्था रखनी चाहिये। ऐसा विचार किया जाय, तब फिर इस जगतमें चुप होकर बैठना ही पड़ेगा।

कालि०—बहन! आप विदुषी होकर कैसे भूल रही हैं? अपने शरीरमें ही एक ऐसा पदार्थ है जिससे मनुष्य शरीर सार्थक हो जाता है।

भानु०—कहो! ऐसा कौनसा पदार्थ है?

कालिक०—गुण नामका एक महान पदार्थ है, उसका आत्माके साथ सम्बंध करनेसे हम अपने जीवनकी उन्नति कर सकते हैं। आत्माकी सहज गुणमें वृद्धि करनेसे मनुष्य उन्नतिके मार्गपर आरूढ़ हो सकते हैं। अतः आत्मगुणके सिवाय अन्य जगतके सब पदार्थ अनित्य, नाशवंत और अस्थिर हैं। एक आत्मगुण ही शाश्वत और स्थिर है। इस गुणके प्रभावसे मनुष्य मोक्षके मार्गका अधिकारी हो सकता है।

प्रिय बहन! मैं सदा आत्माके सहज गुणकी खोजमें रहता हूं। कोई भी मार्ग ग्रहण कर मुझे उस उत्तम-पदार्थकी प्राप्ति करनी है।

मुझे मेरे हृदयमें निश्चय हो गया है कि आत्मगुणकी उन्नति किये बिना हृदयको सुख-समाधि प्राप्त नहीं होती है। यह भी निश्चय है कि इस संसारके आत्मगुणको प्राप्त करनेमें अन्तराय करनेवाले हैं, अतः इन सब पौद्गलिक पदार्थोंकी ओर मेरी उपेक्षा है।

कालिककुमारके इन वचनोंको सुनकर सती भानुमती हृदयमें विचार करने लगी—"इस राजकुमारके हृदयमें तीव्र वैराग्य उत्पन्न हुआ है। सचमुच अल्प समयमें ही संवेगको धारण करेगा। और वह अपने भाईसे बोली—बन्धु! आपके मानसिक विचार जानकर मेरे हृदयमें अतीव संतोष हुआ है। आपको अपने पुण्यके योगसे मोक्ष-मार्गकी पवित्र सीढ़ी हाथ

लगी है। आप अपने मानव-जीवनको सार्थक कर सकेंगे ऐसी मेरी पूर्ण श्रद्धा है। प्रिय भाई! आपके इस विचारका मैं अनुमोदन देती हूँ कि आपके ये विचार सफल हों।" सुनकर भाई कालिककुमारने बहनका आभार माना।

कालिककुमारने वैराग्य भावनाको प्राप्त कर अन्तमें जैन दीक्षा धारण की। उन्होंने माता-पिताकी प्रसन्नता प्राप्त कर इस संसाररूपी सागरसे पार पानेके लिए चरित्ररूपी नौका ग्रहण की। सिंहके समान महाव्रतोंको धारण कर उन्होंने बहु-श्रुतका अभ्यास किया और अंतमें आचार्यपद संपादन किया। कालिककुमार जैन मुनि मंडलमें विख्यात कालिकाचार्यके नामसे प्रसिद्ध हुए।

भानुमतीके पति जितारिने अपने राज्यमें जैनधर्मकी काफी उन्नति की थी। भानुमती सदा जैनधर्मकी उपासना करती थी, स्वभाव औदार्यसे साधर्मी बंधुओंको आश्रय देती थी। भृगुपुर (भरुच) नगरकी सर्व जैन प्रजामें उनकी धर्मकीर्ति फैल गई तथा अन्य क्षेत्रोंमें भी उनके गुणोंकी प्रशंसा होने लगी।

पश्चात् क्रमानुसार भानुमतीको बालभानु और भानुमित्र नामक दो पुत्र हुए। उन्हें भानुमतीने बाल्यावस्थासे ही सुशिक्षित किया। अपनी सती माताके प्रभावसे वे दोनों स्वधर्ममें श्रद्धा रखते हुए श्रावकाचारका पालन करते थे। महान कालिकाचार्यके भानजोंने अपने मामाके पवित्र संबंधको अच्छी

तरह देदीप्यमान किया। अंतमें राजा जितारि धर्मकी उपासना करते हुये मृत्युको प्राप्त हुये।

अतः भृगुपुरके राज्य आसनपर बालभानु राजा और भानुमित्र युवराज नियत हुये। सती भानुमती द्वारा अच्छी शिक्षा पानेसे वे दोनों भाई एकतासे राज्य-वैभवमें अनासक्त रहकर धर्मसाधन करते थे। सती भानुमती अपने दोनों पुत्रोंका सदाचार देखकर हृदयमें प्रसन्न होती थी और स्वयं श्राविका धर्मको यथार्थ रीतिसे पालन कर सद्गतिकी पूर्ण पात्र बनी।

कालिकाचार्यने जैन धर्मकी काफी वृद्धि की थी। भारतकी आर्य प्रजाको धर्मोपदेशसे धर्माराधक बना दिया था।

एक समय कालिकाचार्य विहार करते हुये भृगुपुरमें पधारे, वहां उनके बालभानु और भानुमित्र भानजोंने बड़े आडम्बरसे उनका नगर प्रवेशोत्सव कराया। कालिकाचार्यकी असाधारण उपदेश-शक्तिको देखकर उन दोनों भानजोंने भृगुपुरमें उनका चातुर्मास करवाया और धर्मके अनेक उत्सवकर भृगुपुरकी सर्व प्रजामें धर्मका प्रभाव बढ़ाया।

इस समय भृगुपुरमें गंगाधर नामका एक समर्थ विद्वान रहता था, उसे कालिकाचार्यके एक बालशिष्यने वादमें पराभूत किया, जिससे धर्मका प्रभाव विशेष वृद्धिको प्राप्त हुआ। अन्तमें सती भानुमतीके पुत्र बालभानुने कालिकाचार्यके पास दीक्षा ली। उसका महोत्सव उसके दोनों मामाकी ओरसे बहुत ही उत्तम रीतिसे किया गया।

कालिकाचार्य पश्चात् प्रतिष्ठानपुरमें आए, उस नगरमें शालिवाहन नामका पराक्रमी राजा राज्य करता था। धर्मके उपासक होनेसे उन्होंने आचार्यको अपने नगरमें चातुर्मास कराया।

एक समय पर्यूषण पर्व आने पर राजा शालिवाहनने आचार्यसे पूछा:—

"स्वामी! पर्यूषण पर्व कौनसे दिनसे करना चाहिये ?

आचार्यने उत्तर दिया—'भाद्रपदकी शुक्ला पंचमीके दिन पर्यूषण पर्व करना चाहिये।'

तत्पश्चात् राजाने नम्रतासे कहा—'स्वामी उस रोज यहां इंद्र महोत्सव होता है। अतएव जो पर्यूषण पर्वका उत्सव उस पंचमीके पहले ही हो तो मैं उस दिनमें तप-नियम तथा जिनालयमें महोत्सव कर सकता हूं।' राजाकी ऐसी इच्छा जानकर कालिकाचार्यने विचार कर कहा—'राजन्! आपकी इच्छानुसार पंचमीके पहले पर्यूषण पर्व हो सकेगा।

चौथके दिन भी संवत्सरी पर्व करना हो तो हो सकता है। सती भानुमतीके बंधु कालिकाचार्यने उस अयोग्य रीतसे वर्तनेवाले जैन मुनियोंको अच्छे मार्ग पर लगाया। अवन्ती देशमें विचरनेवाले जैन मुनि प्रमादके अधीन हो गए थे। उस समाचारको जानकर महानुभाव कालिकाचार्य उज्जयिनीनगरीमें आए। वहां भी प्रमादके आधीन जैन मुनियोंसे उन महानुभावने

जिन वचनोंको कहा। वे वचन वर्तमानमें हृदयमें अंकित करने योग्य हैं।

पूर्वकालमें आचार्य अपनी सत्तासे जैन मुनियोंको अच्छी तरह आचरण करानेका प्रयत्न करते थे। उसमें खासकर मुनि लोग प्रमादके महान् दोषमें लुब्ध न हो उसके लिए बहुत ध्यान रखते थे।

कालिकाचार्यने उज्जयिनीनगरीमें आकर सर्व जैन मुनियोंको एकत्र कर इस प्रकार वचन कहे—साधुओ, सुननेमें आया है कि आप प्रमादके वश होकर चरित्र धर्मकी उपेक्षा करनेवाले हो गये हैं यदि ऐसा हुआ है तो आप सबके लिए बड़ी लज्जाकी बात है। अपने चारित्र धर्मके लिए जैन आगममें क्या लिखा है? उसका आप विचार करें।

लिखा है कि मुनियोंको व्रत पालनेमें लेशमात्र भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। क्योंकि प्रमाद साधुओंको संसार-समुद्रमें डुबा देता है। उपशम चारित्री, ऐसे महापुरुष भी प्रमादके कारणसे तुरत चारों गतिमें भ्रमण करते हैं।

धर्ममें प्रमाद करनेसे जो हानि होती है वह हानि चोरके लूटनेसे, और अग्निके जलनेसे भी नहीं होती। कालिकाचार्यकी इस शिक्षाको कितनेक स्वच्छन्दी मुनियोंने मान्य नहीं की थी। पश्चात् कालिकाचार्य गुप्त रीति वहांसे विहार कर गए। और उन्होंने उन साधुओंको प्रमादसे छुड़ानेके लिए शिक्षा दी।

कालिकाचार्यने अपनी पिछली अवस्थामें भारतीय जैन

प्रजाके आचारमें अच्छे सुधार किये थे। अन्तमें प्रतिष्ठानपुरमें चातुर्मास किया। उस समय देवलोकके स्वामी इंद्र सीमंदर-स्वामीके मुखसे कालिकाचार्यकी प्रशंसा सुनकर वृद्ध ब्राह्मणका रूप धारण कर उनसे मिलनेको आये।

समर्थ कालिकाचार्यके मुखसे निगोदका स्वरूप सुनकर इंद्र बहुत ही खुश हुआ। इंद्रने आचार्यकी परीक्षा करनेके लिए प्रश्न किया–"भगवन्! मेरी आयु कितनी है?" उत्तरमें उन्होंने दो सागरोपमकी आयुष्य बताई थी।

प्रसन्न होकर इंद्रने रूप प्रकट किया। और याचना की– जब तक आपके साधुगण न आयें मैं यहाँ रहूंगा। सुनकर आचार्य बोले—"देवराज। आपका स्वरूप देखकर मेरे साधुगण वैसा निदान करेंगे" इंद्र चले गये। गुरुके कहने पर साधुओंको बात मालूम हुई। और वे आश्चर्यित हुए। उन्होंने कालिकाचार्यकी ओर विशेष भक्तिभाव प्रकट किया।
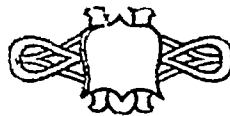
(३)

पुनर्मिलन

मणिपुर गाँवमें प्रतापके पिता साधारण स्थितिके मनुष्य थे। बचपनसे ही इनकी रुचि पढ़ने लिखनेकी तरफ विशेष रूपसे थी। मिडिल तक पढ़ाई समाप्त करनेके पश्चात् पिताने बहुत समझाया कि अब खेतीबारीका काम करो, आगे पढ़ना व्यर्थ है। लेकिन प्रतापकी प्रबल इच्छाको कोई न पलट सका। १५ वर्षका बालक प्रताप रात्रिके अंधकारमें चुपचाप कन्धे पर लाठी रखकर घरसे निकल पड़ा। मणिपुरसे स्टेशन दो मील पर था। प्रताप स्टेशन पर आया, पश्चिमकी गाडीमें थोड़ी ही देर थी, गाडी आई। प्रताप टिकट ले एक तीसरे दर्जेके डब्बेमें जाकर बैठ गया।

प्रताप जब छोटा था तो एकबार अपनी मांके साथ माघ मेलेके अवसर पर गंगा स्नानके लिए प्रयाग गया था, अतः उसने वहीं चलनेका निश्चय किया। दो घण्टेमें गाड़ी प्रयाग स्टेशन पर आ लगी। प्रतापने सोचा अब इस अनजान जगहमें वह किसके आश्रयमें जाये। अतः वहीं रात बिता डाली। सुबह होते ही शहरमें आकर एक दुकानके सामने आकर खड़ा हो गया, वहां पर ग्राहकोंकी चीजें पहुँचाकर दो चार आने पैसे मिल गए। उन्होंने उससे क्षुधाकी पूर्ति की।

प्रताप बुद्धिमान था और हृदयमें अदम्य उत्साह था। उसका मन अपने निश्चयसे विचलित न हुआ। तीन चार दिन इसी तरह बीत गए। एक दिन एक सहृदय सज्जन दुकान पर कोई वस्तु लेने आए, साथमें सामान अधिक होनेके कारण मजदूरके लिए खड़े थे। प्रतापके ऊपर दृष्टि पड़ी, प्रतापने सामान उठाया और पीछे चला। उनके घर पहुंचकर उनकी स्त्रीको सामने बैठा पाया।

प्रतापको अपनी मांकी याद आ गई, उसकी आंखोंमें आंसू आ गए और मुखसे सहसा निकल पड़ा, मां! सामान कहां रख दूं? मांका संबोधन सुनकर सुशीलाने उधर देखा। प्रतापकी सरल मुखाकृति और आंसूभरी आंखे देखकर उन्हें बड़ी दया आई। बाबू साहब भी दयार्द्र हो उठे। उन्होंने प्रतापको बैठाकर उसका हाल पूछा। उसने आदिसे अंत तक सारी बातें सच-सच बता दीं।

गिरधारीलालकी वकालत अच्छी चल रही थी, धन-धान्यकी कमी नहीं थी किंतु पुत्ररत्नकी कमी थी। उसके बिना उन्हें सब दुःखमय प्रतीत होता था। बड़ी उत्सुकतासे वे पुत्र–रत्नकी बाट देख रहे थे। उन्होनें प्रतापको होनहार बालक समझकर घरमे रख लिया।

प्रतापको मानों स्वर्गका चांद मिल गया। उसका नाम स्कूलमे दर्ज कराया गया और अपने सुशील स्वभावके कारण प्रिय हो गया। प्रतापके आनेके एक वर्ष पश्चात् सुशीलाको पुत्र

हुआ। दोनों दंपतिके हर्षकी सीमा न रही। प्रतापके आगमनको शुभ समझकर उससे और भी प्रेम करने लगे।

प्रतापके चले जाने पर उसके माता पिताको बहुत चिन्ता हुई। उन्होंने उसे पानेकी बहुत चेष्टा की किन्तु सब निष्फल हुआ। मां बिचारी रो-रो कर दिन काटने लगी।

प्रतापने दो सालमें एन्ट्रेंस पास किया. उसके हर्षका पारावार न था। उसके मनमें माताके दर्शनकी लालसा बलवती उठी। प्रतापके माता-पिताने उसका ब्याह १२ वर्षकी अवस्थामें ीपुरके सम्भ्रांत परिवारमें ईश्वरप्रसादकी ७ वर्षकी कन्या साथ कर दिया था, एकाएक बाढ़ आनेसे सारा गांव और किसी भी व्यक्तिका कुछ पता न लगा।

छुट्टियां होते ही गिरधारीकी आज्ञासे वह घर चल रीके समय एकाएक माताके सामने खडा हो पंखोंके बहुमूल्य मोतियोंको चढ़ाकर माताकी ने भी उन्हीं मोतियोंके उपहारके साथ

र दृश्य था। दो सालसे बिछुड़े माता त होता था मानों सुख-दुःख ही र देरके पश्चात् माताने पुत्रसे सारी किशोरीलाल भी पुत्रको देखकर ना कि प्रतापने एन्ट्रेंस पास कर सीमा न रही। सारे गांवमें

उसीकी चर्चा होने लगी, और सभी प्रतापको देखकर खुश हुए। लोगोंकी धारणा थी पढ़ लिखकर लोग साहब हो जाते हैं, सूट-बूट पहने बिना बाहर नहीं निकलते, उनकी धारणा गल्त हो गई। प्रतापको वही धोती कुरता और कंधे पर लाठी रखकर जाते हुए देखा गया। प्रतापको शहरी जीवनसे ग्रामीण जीवन अधिक प्रिय था। अतः उसने अपनी सादगीका साथ कभी न छोड़ा।

छुट्टीके दिन पूरे हुए और प्रतापने कोलेजमें पैर रखा। बहुत मनोयोगसे पढ़ाई करता था। सालमें दो तीन बार आकर माताके दर्शन जरूर कर लेता।

बी० ए० की परीक्षाके दिन निकट आ रहे थे। प्रतापकी यही अन्तिम सीढी थी। पढ़नेकी धुनमें उसे कुछ भी नहीं सूझता। बड़े उत्साहसे वह परीक्षामें बैठा। दो पर्चे बाकी ही थे कि मांका पत्र मिला-बेटा! एकबार और आ जाओ, शायद फिर मांसे भेंट न हो सके। प्रतापका मन रो उठा उसकी इच्छा हुई कि इसी समय परीक्षा छोडकर चल दे। लेकिन फिर सोचा दो दिनकी तो बात है इतने दिनोंकी पढ़ाई व्यर्थ जायगी। इष्ट मित्रोंने भी यही राय दी। जैसे-तैसे परीक्षा समाप्त कर प्रताप एक बजेकी गाडीसे घर पहुंचा। वही गोधूलीका समय था जिस-समय दो सालके बाद मांसे मिला था। आज भी वही सन्ध्या है।

प्रताप शून्य हृदयसे गृहके आंगनमें खड़ा था उसे

देखते ही पिताकी आंखोंमें आंसू आगए और बोले—बेटा! तुम्हारी मां अब स्वर्गमें है। प्रतापका कलेजा धकसे रह गया। उसके संयमका बांध टूट गया, वह बच्चोंकी तरह फूट फूट कर रोने लगा। पास-पड़ोस और पिताके समझाने पर भी उसे धैर्य न हुआ। उसने मांके सिवाय किसीका ध्यान नहीं किया, माता ही उसकी आशा थी। आज मांके बिना वह अनाथ हो गया। और हृदय भी शून्य होगया। छोटी अवस्थामें खेलके समान उसका व्याह जरूर हुआ था। पर उसने अपनी पत्नीको कभी नहीं देखा था। हां इतना जरूर सुना था कि उसके ससुरालके लोग बाहमें स्वापना हो गए हैं। उसने पढ़ने-लिखने और माताकी ममताके सिवा और कुछ न सोचा था। आज उसे वही घर श्मशानसा लग रहा था।

रात्रिके १० बजे थे। प्रताप अपनी लाठीको सम्हालकर स्टेशनकी ओर चल पड़ा। वह सोचता था कि आजसे ६ वर्षकी बातें कि कैसे वह रात्रिके अंधकारमें माताको छोड़कर पढ़ने चला गया था, उसी मार्गसे वह शून्य हृदय लेकर डिग्री पाकर जा रहा है इन्हीं दुःखकी तरंगोंमें गोता खाता हुआ वह स्टेशन पहुँच गया। सहसा प्रतापकी आंखोंने कुछ देखा।। एक बार इसे भ्रम हुआ, दूसरे ही क्षण उसने देखा कि एक १६ वर्षीय बालिका भयभीत दृष्टिसे अपने सामने आये हुए सर्पको देख रही है। वह तुरत बालिकाका हाथ पकड़कर चक्कर देता हुआ दूर निकल गया। प्राणोंकी बाजी लगा उसने बालिकाकी रक्षा की।

सर्पके भयसे छुटकारा पानेके पश्चात् प्रतापने बालिकाका परिचय पूछा। वह अभीतक भयसे कांप रही थी, कुछ देरके बाद स्वस्थ होकर बोली कि मेरा नाम शान्ता है। पास ही जंगलमें एक कुटी है जिसमें मैं और मेरे पिता रहते हैं। वे गांव–गांवमें घूम कर सेवाधर्ममें तत्पर रहते हैं। मैं जल लेनेके लिए आई थी। आपने मेरी प्राण रक्षा की है अतः आप हमारी कुटीमें चलकर पिताजीको दर्शन दें। प्रताप उसकी बात न टाल सका। देखा, सन्यासी बाहर ही पत्थरकी शिला पर बैठ कर पुत्रीकी राह देख रहे हैं। शान्ताने सब बातें सविस्तार सुना दीं। पिता सुन कर आनंदित हुए। प्रतापने भी हाथ जोड प्रणाम किया। सन्यासीने कहा—पुत्र, तुमने अपने प्राणोंकी बाजी लगा इसकी रक्षा की है अतः मैं सदा ऋणी रहूंगा, तुम अपना परिचय बताओ।

प्रताप सारी बातें कहकर चुप हो गया, माताकी यादमें उसकी आंखोंसे अविरल धारामें आंसू बहने लगे। साधुने धर्मकी चर्चा कर उसे संबोधित किया। प्रतापने रात्रि वहीं व्यतीत की। सवेरा होते ही वह सन्यासीको प्रणाम कर स्टेशनकी ओर चल पड़ा। प्रयागमें आकर वह गिरधारी-लालकी सहायतासे एक स्कूलमें हेडमास्तर हो गया। अब उसे किसी बातकी कमी न थी, किन्तु मनको शांति नहीं थी। बड़े समुद्रमें अकेले चलनेवाले नाविककी भांति इस अथाह समुद्ररूपी संसारमें वह अकेलापन महसूस करने लगा। निम्न

लिखित पत्रसे उसकी संवेदना प्रत्यक्ष प्रकट होती है। उसने काशीमें रहनेवाले अपने अभिन्न–हृदय मित्रके पास लिखा था—

प्रिय योगेश !

तुम्हें प्रसन्नता होगी कि तुम्हारा मित्र बी. ए. में सर्व प्रथम आया है, किन्तु मै तो अपना सब–कुछ खो बैठा। मेरा हृदय माताके प्रेमसे रहित हो गया इससे बढ़कर और दुःखकी बात क्या होगी, मेरा जीवन उस महाभूमिके समान शुष्क हो रहा है जिसका कोई ओर छोर नहीं। जहां प्रेमरूपी सलिलकी एक बून्द नहीं। मेरे लिये तो सभी मार्ग बन्द हैं, यदि मैं बिना सोचे समझे कुछ कर बैठूँ तो ईश्वरको क्या उत्तर दूँगा ?

इन सब विचारोंने मुझे पागल–सा बना दिया है। यहां पर सभी आग्रह कर रहे हैं, पिताजीका पत्र भी विवश करता है किंतु मैं अभी कुछ और समय इसी तरह बिता दूँगा। एक-बार तुम यहां आओ जिससे मुझे कुछ धैर्य हो।

—तुम्हारा प्रताप।

गर्मीकी छुट्टियोंमें स्कूल बंद हो गए। पिताके कई पत्र आने पर प्रतापने घर जानेका निश्चय किया। मणिपुरमें महा-मारीके लक्षण दिखाई पड़ने लगे। सब लोग मृत्युके भयसे भयभीत हो उठे। प्रतापने देखा कि एक मनुष्य हर घरमें जाकर दवा देता है उसके साथकी बालिका बड़े प्रेमसे सेवाका कार्य करती है। प्रतापने गौरसे देखा, पुरानी स्मृति जाग उठी। उसने आगे बढ़कर सन्यासीको प्रणाम किया।

सन्यासीने भी उसे पहचान लिया और आशीर्वाद दिया। और शांता! शांता तो चित्रलिखित-सी हो गई। उसे ऐसा लगा जैसे स्वप्न देख रही हो। क्षणभरमें वह सजग हो उठी। उसने प्रतापको प्रणाम किया। दूसरे दिनसे प्रताप भी वहीं उनके साथ रोगियोंकी सेवा करने लगा।

इन लोगोंके अथक परिश्रमसे मणिपुरमे शांति हुई। किंतु सब लोग दुःखी थे। कोई मातासे विहीन होकर कोई पुत्रसे और कोई पितासे। कितनी ही ललनाओंके सिन्दूर पुछ गए। दुःख अपना साया सबके माथे पर छोड़ गया।

छुट्टीके दिन पूरे हो गए, दो चार दिनोंमें प्रताप प्रयाग जानेवाले थे, इसी बीच एक दिन प्रतापसे सन्यासीने पूछा—बेटा! मेरी एक बात मानोगे? प्रतापने कहा—मैं आपकी आज्ञा सहर्ष स्वीकार करूंगा। सन्यासीने प्रसन्न होकर कहा—जिसकी तुमने प्राणोंसे रक्षा की है उसकी रक्षा जीवनभर करनेका भार ग्रहण करो, मैं निश्चिंत होकर अब भगवानका भजन करूंगा। मेरी यह चिंता दूर करो, मैं आशीर्वाद देता हूँ कि तुम सुखी हो जाओगे। प्रताप सन्यासीकी बात टाल न सका। जिस शांताके प्रति उसके हृदयमें करुणा सहानुभूति भरी थी उसी शांताके प्रति आज सहसा प्रेमका संचार हो उठा। उसे ज्ञात हुआ मानों वह दूसरा जन्म पा गया।

वृद्धने शान्ताका हाथ प्रतापको पकड़ा दिया और आशी-

चाँद भी दिया। आंसुओंकी झड़ी लग गई। शान्ताको एक तरफ पितासे बिछुड़नेका दुःख था तो दूसरी तरफ परोपकारी आदर्श जीवन सहचर पानेकी खुशी थी। न जाने उसके आंसू दुःखके थे या सुखके, वृद्धका गला भी भर आया। उसने कहा—तुम लोग मेरी जीवन कथा सुन लो—

मैं अपने पिताका एकलौता पुत्र था। बाल्यावस्थामें ही पिताका स्वर्गवास हो गया तबसे मेरी प्रवृत्ति सदा सेवा करनेकी है। बड़े होनेपर लोगोंने समझाया कि ब्याह कर लो, किंतु मेरा विचार गृहस्थीके झंझटोंमें पड़नेका न था। अतः मैंने सेवा करना ही ध्येय मान लिया। घरमें रहकर ही तीर्थयात्रा तथा दुःखियोंकी सहायता किया करता था। अधिक अवस्था होनेपर विचार हुआ कि घर छोड़ दूँ। सारा धन पुण्य कर्ममें लगाकर घरसे निकल पड़ा। उस समय भी मेरे पास पिताकी रखी हुई संदूक मुहरे थीं। मैंने उसे एक वृक्षके नीचे गाड़ दिया।

मुझे जब जब दीन-दुखियोंके लिये द्रव्यकी आवश्यकता पड़ी है तब-तब वहीं से निकाला है। अब तुम लोग उसे ले लो क्योंकि मेरा अन्त निकट है।

आजसे दस ग्यारह वर्ष पहलेकी बात है कि मैं एक गांवमें जा रहा था। अचानक यमुनाके किनारे इस लड़कीको मूर्छित देखा। नाडी चल रही थी अतः कुटियामें लाकर मैंने इसकी दवा दारू की। जब यह निरोगी हुई तो घरका पता

ठिकाना पूछा, लेकिन यह अपना नाम और जातिके सिवाय और कुछ न बता सकी।

अतः आजतक मैंने इसकी देखरेख की, अब इसे तुम्हारे सुपुर्द कर मेरा हृदय निश्चिन्त हुआ है। मैं जाता हूं तुम इसे यत्नसे रखना, यही मेरा उपदेश है, कहकर सन्यासीने वहांसे प्रस्थान किया।

प्रतापके स्वभावमें बचपनसे ही दृढ़ता थी। जिस बातका संकल्प करता था, लाखों मुशीबतें आने पर भी नहीं छोड़ता था। इस समय भी उसने अपना कर्तव्य स्थिर कर लिया। उसकी इच्छा हुई कि प्रयाग चलकर रहें। किन्तु सन्यासीके उपदेश और शान्ताकी प्रेरणासे उसे भी सेवाका ही मार्ग सूझा।

गांवके समीप ही यमुनाके किनारे एक छोटासा मकान लेकर वे रहने लगे। शांता दिनमें रोगियोंको जाकर औषधि देती, पथ्यका प्रबंध कर देती, माताओंको बच्चोंको साफ रखनेकी शिक्षा देती, पहननेके लिए वस्त्र देती। रात्रिमें गाँवकी स्त्रियोंको एकत्रित कर धर्मशास्त्र और सतियोंकी कथाएं सुनाती, शान्ता सबकी श्रद्धा-भाजक बन गई। दिनमें एकबार शान्तासे विना मिले किसीका जी न मानता था।

प्रतापने कुछ जमीन लेकर उसमें औद्योगिक शिक्षाका प्रबंध किया। गांवके जितने लड़के थे उन्हें कई तरहकी शिल्प-शिक्षाएं दी जाने लगीं, वहांसे शिक्षा पाकर वे भली-भांति अपना जीवन निर्वाह करते थे। वैद्यक शिक्षाका भी समुचित

प्रबंध था, वैद्यक शिक्षा पाए हुए विद्यार्थी गांव-गांवमें बसकर लोगोंकी दवा करते थे। सारी दवाएं प्रतापके सेवा-सदनसे मुफ्तमे दी जाती थीं।

शांताने स्त्रियोंके लिए एक विधवाश्रम और बालाश्रम खोल रखा था जहां उन्हें योग्य शिक्षा दी जाती थी। योग्य अवस्थाकी स्त्रियाँ गांवमें जाकर अन्य स्त्रियोंको शिक्षा देती थीं विधवाओंको शीलधर्मावलम्बिनी बनाती थीं। प्रताप और शांता इसी तरह सेवा-धर्मका पालन कर बड़े आनंदसे जीवन व्यतीत कर रहे थे, सारा गांव ही उनका परिवार हो गया था।

संध्याका समय था, कई दिनोंसे गांवमें एक साधू आए हुए थे। उनके उपदेशकी प्रशंसा सुनकर प्रताप और शांता भी गये। वहां पहुँचकर देखा कि एक वृद्ध साधू वृक्षकी डाल पर बैठकर उपदेश दे रहा है। नीचे बहुतसे मनुष्य हैं। साधुकी दृष्टि हर व्यक्ति पर पड़ रही थी, इन लोगोंने भी साधुको प्रणाम किया और वहीं बैठ गये। साधुने बड़ी देर तक शांताको देखा और फिर पास आकर शांताको गलेसे लगा लिया। यह देखकर सब लोग आश्चर्यित हुये।

साधुने सबको लक्ष कर कहा—भाइयों! यह मेरी पुत्री है, मेरा नाम ईश्वरीप्रसाद है। मेरा घर भवानीपुरमें था, मैंने अपनी लड़कीका व्याह इसी गांवमें किशोरीलालके पुत्रसे कर दिया था। अकस्मात् यमुनाकी बाढमें गांवका गांव जलमग्न

हो गया था । जब मेरी आंख खुली तो अपनेको रेतपर पड़ा पाया । पास ही पुत्रीको देखा लेकिन अत्यधिक दुःखके कारण वैराग्य हो गया और इसे भाग्यके भरोसे छोड़कर हिमालयकी ओर चल पड़ा ।

तपस्या की किंतु ममताने साथ न छोड़ा, दिलको शांति न मिली । एक दिन मैंने अपने गुरुसे अन्तःकरणका सारा हाल कह सुनाया । उन्होंने कहा—तुम चेष्टा करो तुम्हारा काम जरूर पूरा होगा। पुत्रीके मोहमें मैं यहांसे चल पड़ा । कई जगह घूमते—घामते यहाँ पहुँच गया। आज मेरी पुत्री मिल गई, मेरी मनोकामना पूरी हो गई है। प्रतापके पिता भी वहीं खड़े थे, उन्होंने समधीको पहचाना। सभी प्रसन्न हुए, उन्होंने प्रतापकी सारी बातें कह सुनायीं और पश्चात्तापसे रोने लगे ।

वृद्धने बातें सुनी तो हर्षका पारावार न रहा, उसने प्रतापको गले लगाया। शान्ताका स्वाभाविक प्रेम उमड़ आया, दोनों वृद्धके चरणों पर गिर पड़े, कैसा दृश्य था? विधिके इस "पुनर्मिलन"पर सभी उपस्थित सज्जनोंकी आंखें भर आयीं।

(४)

एक चर्खेकी मनोरंजक कहानी

मैं अपने पिताकी गोदमें क्रीडा करता हुआ और मान-सरोवरके तट पर विहार करता हुआ हसोंकी जोड़ियोंको देख देखकर प्रफुल्लित होता था। ब्रह्मपुत्राका निर्मल जल मेरे पिताके पैरोंको धोता एवं कलकल नाद करता हुआ न जाने कहां चला जाता था और फिर लौटता नहीं था। मैं अपने मनमें सोचा करता था कि इसी तरह जीवनके दिन लौटकर नहीं आते। स्वर्ण-कमल-रजसे सुगंधित पवनके झोंके मेरे पारिग पल्लवोंको स्पर्श करते और उन्हें हिला—हिला कर चले जाते थे। नीले आकाशके नीचे बिछी हुई मानसरोवरकी श्वेत जलराशि पवित्रताकी मानों प्रत्यक्ष मूर्ति थी। अनेक मणिमय शिलाएं पड़ी हुई थीं।

कहीं—कहीं साधुओंके सुन्दराश्रम बने हुए थे। प्रातःकाल ईश्वर ध्यानस्थ मुनियोंकी मुद्रा (मूर्ति) बड़ी ही भव्य जान पड़ती थी। वह दृश्य देखने ही योग्य था। मैं उन्हें देख देखकर अपना सबल सा समझा करता था। हिमाच्छादित पहाडोंके शिखरोंका दृश्य भी बड़ा अद्भुत था। दिन रात निराली छवि दृष्टिगोचर होती थी। प्रकृतिदेवीका पुण्य धर्म ही मानों वहीं पर था।

उस शांत तपोवनमें जन्म लेकर मैं अपने जीवनको धन्य मानता था कि एक दिन अचानक मेरे पिताजी जलमें गिर पड़े और मैं भी कांपता हुआ गिर पड़ा तथा उनके हृदयसे चिपट गया तथा अनेक प्रकारकी चिन्ताएं करने लगा।

जलकी प्रीति ही कितनी? जो नित्य ही मेरे पिताके पद-कमल धोया करता था, वही अपनी तरंगो द्वारा बेतरह प्रहार करने लगा। मैं पत्थरोंकी मार खा खाकर मूर्छित हो गया। मुझे ज्ञात नहीं कि पिताजीका क्या हुआ।

जब होश हुई तो देखा कि मैं उनसे पृथक् होकर डिब्रूगढ़ होता हुआ आसाम प्रांतकी ओर जा रहा हूं। इसी प्रकार मैं चला जा रहा था कि आसाम प्रांतके ब्रह्मपुत्रके मोड़ पर एक खोखलेमें अटक गया। मैं अपना अभाग्य देखकर मनमें चिन्ता कर रहा था और जलसे कह रहा था—पापी जल! तूने मुझसे कौनसे जन्मका बदला लिया?

इतना अभी कहा ही था कि जलने एक और चपेटा दिया। खैर, वहांसे मैं श्री भागीरथीके दर्शनकी उत्कंठासे सहर्ष चला आ रहा था कि इतनेमें मेरी आकांक्षा पूर्ण हो गई।

मैंने भक्तिपूर्वक गंगाजीके सादर चरण स्पर्श किये एवं अपनेको सफल समझने लगा, किन्तु हाय! यह सुख भी मेरे भाग्यमें नहीं बदा था। एक मनुष्यने मुझे देख लिया और मेरे बहुत कुछ अनुनय-विनय करने पर भी बड़ी निर्दयतासे मुझे

खींच लिया। हाय हाय! उस समयके दुःखका क्या ठिकाना? कुछ कहते नहीं बनता। खैर फिर भी मैंने जोर तो बहुत लगाया, मगर मेरा कुछ बस न चला। अरे! चलता भी कैसे, मैं तो पतला दुबला, सूखा--साखा और वह संडमुसंड पच-हत्ता जवान!

बाप रे बाप! वह मुझे अपने घर ले ही आया और वहां कई दिन तक बड़ी निर्दयताके साथ धूपमें डाल रखा। मैं उस समय पिछले सुखोंको स्मरण कर दुःखसे कराहा करता था। उस समय मेरे हृदयमें अनेक भाव उठते, मैं सोचा करता—ओह! दिन सचमुच सदैव एकसे नहीं होते।

उस समय मुझे सांसारिक सुखोंकी नीरसता ज्ञात हुई। मैंने संसारको स्वार्थी जाना, ऐसे विचार कई दिनोंतक मेरे हृदयमें होते रहे। मैंने सोचा कि इसके आंखसे ओझल होते ही नौ दो ग्यारह हो जाऊंगा मगर उसने भी शनि--छठीका दूध पिया था। भला उसके हृदयमें दयालुताका नामों--निशान हो सकता था? अरे रे रे! मारपर मार!!

एक दिन उस निर्दयीको न जाने क्या सूझा! वह मुझे यहांसे उठा लाया, एक लोहेसे (वसूला) लगा मेरे बदनको छीलने। मैंने उससे बहुत प्रार्थना की किंतु वह कब मानने-वाला था। मैं उसके प्रहारोंको सहते—सहते मूर्छित हो गया। जब होश हुई तो अपना नया ढ़ंग देखा। अब मेरा एक

आकार बन गया। उसने मेरे शरीरपर छौंक लगाया। उस समय मेरी ठीक वही अवस्था थी जो जले पर नमक छिडने पर होती है। अरे! होती कैसे नहीं। एक तो मेरा सूखा शरीर उस पर भी कई रोजका लंघन और तिस पर भी वसूलेसे मांस और त्वचा छील हड्डी रखना और उस पर भी वारनिश। बापरे बाप! आप हंसते हैं और मेरी जान पर बीत रही थी। ठीक है "वो क्या जाने पीर पराई, जाके पैर न फटी बिवाई।"

अब तो वह मुझे बाजारमें ले गया, वहां मैं बेचा गया। वहाँ शुभोदयसे एक महाशयने खरीद लिया और ले गया अपने घर। वह मुझे बडी अच्छी तरह रखने लगे, मैंने भी उनका स्वभाव देखा तो उनके हितमें कोई कसर न रखता था। मैंने अपने शरीरसे जो संसारोपकार किया था वह अवर्णनीय है। बाल–वृद्ध, युवक–युवती, देश–समाज एवं निर्धन–धनी सभीका मैं हितैषी बन गया। मैं अपने मुंहसे अपनी प्रशंसा करते संकुचाता हूं। अतएव थोडी ही प्रशंसा की है।

फिर समयने पलटा खाया और लोगोंको मेरी ओरसे अरुचि होने लगी। वे मुझे भूलकर मशीन द्वारा बुने हुए वस्त्र पहनाने लगे। मशीनोंसे ही सूत कतने लगा। इसका परिणाम भी उन्हें ज्ञात हुआ। समय सदैव एक-सा नहीं रहता, फिर समय बदला और मेरा सम्मान होने लगा। भला हो गांधी बाबाका।

अब मुझे अपनी पूर्व बातें स्मरण होती हैं। मुझे इस बातका अनुभव हो गया है कि बिना कष्ट सहन किये न तो परोपकार कर सकते हैं और न यशकी प्राप्ति हो सकती है। यदि मैं अपनी पूर्वावस्थामें रहता तो यह कार्य नहीं कर सकता।

लेख मात्र मनोरंजक सामग्री ही नहीं है अपितु एक उत्तम आदर्श है, जिस सिद्धांतानुसार जीवकी अवस्था परिवर्तनशील होती रहती है, मनुष्य जन्म बड़े भाग्यसे उपलब्ध होता है। अतः इस समयको व्यर्थ न खोकर उत्तम आचरणों द्वारा इस नरभवको सफल करना चाहिए।

—श्रीमती मनसादेवी विद्याविनोदिनी, नवाई।

(५)
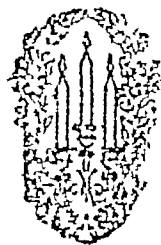
वृद्ध-विवाह

कमला आज १२ वर्षकी पूरी हो चुकी, यद्यपि मैंने सबसे यही कहा है कि यह केवल ग्यारह वर्षकी ही है। चाहे कोई विश्वास करे अथवा न करे। कमलाका विवाह दो वर्ष पहले ही हो जाना आवश्यक था। अब किसी भी प्रकार इस वर्ष इसका विवाह हो जाना चाहिए।

रामनाथकी स्त्री शकुन्तलाने कहा—प्रिय! आप इस कार्यकी चिन्तामें निश्चय ही ग्रसित हो रहे हैं।

रामनाथजी एक बर्तन बेचनेवाले सौदागरके यहां क्लर्कका काम करते थे। उन्हें ४२) मासिक मिलता था तथा ७५) सालाना जायदादसे मिलता था। इस पर भी बड़ी लड़कीका विवाह करनेके कारण उन्हें कर्ज लेकर रुपये खर्च करने पड़े थे।

रामनाथ—कर्ज अदा करनेके लिए कर्जदार मुझे बड़ा ही तंग कर रहे हैं, ईश्वर ही मालिक है, मैं ऋणसे कैसे मुक्त हो सकूँगा? ऐसी भयानक परिस्थितिमें तुम दूसरी लड़कीकी भी शादी करनी चाहती हो। इस समय रुपये बिना लड़कीका विवाह कौन करेगा? रुपिया मेरे पास है नहीं और नहीं मुझे

कोई ऐसी अवस्थामें रुपिया देगा। कमला सुन्दर है परियोंकी तरह गाना गाती है।

यदि संसारमें अभी न्याय है तो किसी अच्छे व्यक्ति आकर स्वयं ही विवाहकी इच्छा प्रकट करनी चाहिये। कोई स्वयं नहीं आता तो घरमें वह शान्तिसे हम लो सहायता देती रहेगी।

शकुन्तला—प्रिय ! मनुष्य संसारमें बदनाम करेंगे।

रामनाथ—मूर्ख मनुष्योंको करने दे।

ऐसा कदापि नहीं होसकता है।

रामनाथ—तब मैं क्या करूं ? एक दूसरा यही उ है कि उसका विवाह किसी दुहेजू तिहेजू उमरगत व्यक्ति कर दिया जाय जिसका कि एक पैर कबरमें लटका हो समझता हूं कि तुम इस बातसे सहमत न होओगी।

शकुन्तला—यह तो एक बड़ी भयानक बात है भी खासकर लड़कीके लिए। किन्तु इसके सिवा दूसरा उ हो ही क्या सकता है ? यदि कोई रुपया न देगा तो मार्ग अवलंबन करना पड़ेगा।

रामनाथ—मुझे तो कोई एक पाई नहीं देगा। अ यही करना पड़ेगा कि किसी विचारशून्य, हृदयहीन, सं सागरसे शीघ्र पयान करनेवाले मनुष्यसे कमलाका विवाह दिया जाय। जो मनुष्य संसारकी विचित्रताको एक

मनुष्यकी तरह देखे तथा स्वार्थकी मात्रा ही जहां पर अधिक है वे ही वृद्ध विवाह करनेको शीघ्र उतारू हो जाते हैं, सामाजिक दंडसे भी नहीं डरते ।

शकुन्तला—ऐसे भयानक चित्र मेरे सामने न बनाइये, ऐसे विवाहके नाम मात्रसे मेरा हृदय डरता है । यद्यपि मैं अच्छी तरह जान रही हूँ कि इसीमें मुझे भी अपनी संमति देनी ही पड़ेगी क्योंकि नहीं तो अपनी कमलाको अविवाहित रखना पड़ेगा । ऐसी अवस्थामें हमारा और उसका दोनोंका ही सत्यानाश हो जायगा ।

रामनाथ—उसकी बात तो वृथा छिपानेसे क्या लाभ है ? जो कि अवश्यंभावी है उसके लिए वृथा आंसू बहानेसे क्या लाभ हैं ? मैं एक मासकी छुट्टी लेकर देखूंगा कि क्या कर सकता हूं ।

शकुन्तला—करिए, जो आपकी इच्छा हो ।

एक माहके अन्दर ही रामनाथने एक ५० वर्षके वृद्धके साथ कमलाका विवाह ठीक किया । उन्हें चारसौ सरकारी वेतन मिलता था । बहुतसे मनुष्योंने अपनी अपनी कन्याओंका विवाह उनसे करना चाहा था किन्तु शंकर-नारायण कमलाके रूपपर मोहित हो इसीसे विवाह करनेको राजी हो गये । रामनाथकी जीत हुई और वे इसीपर हर्ष मनाते हुये घर लौटकर शकुन्तलासे शुभ समाचार कहकर बोले—प्रिय !

सत्यतासे कहता हूं कि कमलाको बड़ा अच्छा घर मिला है। इसे कभी वस्त्राभूषणका अभाव न होगा।

विवाह होनेपर कमला एक प्रतिष्ठित सरकारी कर्मचारीकी स्त्री हो जायगी। समाजमें इसकी प्रतिष्ठा बढ़ जायगी। ईश्वरको अनेक धन्यवाद है कि हमलोग शंकर-नारायण जैसे दामादको पानेमें सफल हुए हैं। वह हम लोगोंकी आवश्यकताके समय बिना सूदके भी रुपया दे सकते हैं। यह संयोगवश ऐसी बात याद आई जो भूलने लायक भी नहीं है।

शकुन्तला—उसकी आयु कितनी है?

रामनाथ—लगभग पचास वर्षकी होगी, किन्तु देखनेमें चालीसके भीतरके लगते हैं।

'क्या वह साठ वर्षका नहीं है? क्या उसके सब दांत गिर नहीं चुके हैं? क्या उसके सिर और नाखोंकी बरौनी भूरी नहीं हो गई है? क्या दोनो गालोंमें गड्ढे होकर आंखें धंस नहीं गई हैं? मैंने और आपने दोनोंने ही उसे देखा है तब आप असली बात क्यों छिपाते हैं?' शकुन्तलाने कहा।

वह इन बातोंसे भी कुछ क्यों न हो किन्तु वह सरकारी कर्मचारी है। चारसौ मासिक वेतन लेता है। इसके अतिरिक्त वह बिना दहेज लिए हुए कमलासे विवाह कर लेगा।

शकुन्तला—क्या यह उसका तीसरा विवाह नहीं है?

क्या उसकी पहली स्त्रीसे चार बच्चे और दूसरीसे छः संतानें नहीं हैं ?

रामनाथने कहा—हाँ, कमलासे दो संतानें पैदा करने लायक शक्ति अभी शंकरनारायणमें बहुत हैं। दो होने पर पूरी एक दर्जन हो जायगी।

बिचारी कमला ! शकुन्तलाने कहा—क्या उसने अपना बीमा कराया है ?

रामनाथ—मैं इस बातको उससे पूछ सकता हूँ ? जहां-तक मैं जानता हूं उसने अपना कोई बीमा नहीं करवाया है।

शकुन्तला—तब आपको उन्हें जीवन बीमा करवानेके लिए बाध्य करना चाहिए।

रामनाथ—इस उम्रमें उनका जीवन बीमा कौनसी कंपनी कर सकती है ?

शकुन्तला—ऐसे निरर्थक जीवनके साथ कमलाको जाने देना कैसा अनर्थ होगा ?

जाने भी दो, मैं इस संबंधको न करूंगा जब कि इससे तुम सहमत नहीं हो। लड़की क्वारी रहे और हम लोगोंका सत्यानाश होता रहे। (इस समय शकुन्तलाने कमलाको पास ही रोती हुई खड़ी देखा।)

शकुन्तला—कमला ! जाओ अपने खाना बनानेके कार्यमें लगो। जब तक मैं स्वयं यहां तुम्हें न बुलाऊं आनेकी आव-

श्यकता नहीं है। तब दरवाजे बंद करके धीमे स्वरमें वाद-विवाद चलता रहा।

शकुन्तला—तब मैं अधिक आपकी संमतिमें नहीं हूँ। किंतु यह बात लड़कीके समस्त जीवन पर आ पड़ती है तब मैं कैसे सहमत हो सकती हूं। अपने धर्मानुसार स्त्रियोंका दूसरा विवाह भी नहीं हो सकता। इसलिए एक नवयुवतीका वृद्धके साथ आजन्मके लिए बंधन गांठ देना बड़ा भारी पाप है।

रामनाथ—हाँ, तुम सत्य कहती हो। किंतु हमको कोई दूसरा मार्ग भी तो नहीं दिखता। ऐसी भी घटना बहुत-सी मिलती है कि वृद्ध विवाहसे भी जीवन-सुखसे व्यतीत हुआ है। हाँ, जब नवयुवती भाग्यपर धैर्य कर लेती है और वृद्ध मनुष्य किसी भी प्रकारका अधिक आयुके कारण उपद्रव नहीं मचाता, ऐसी अवस्थामें यह नवयौवना स्त्री अवैतनिक दासीके समान इन दुष्ट अपाहिज मनुष्योंके दासत्वको नतमस्तक हो स्वीकार करती है। किसी अवस्थामें भी उनके सुखस्वप्न नहीं होते।

रामनाथ—क्या एक भिखारीके मुकाबलेमें एक वृद्ध कर.धेक अच्छा नहीं समझा जायगा जब कि भिखारी होते हुये भी स्त्रीको भोजन नहीं करा सकता?

शकुन्तला—(जोर देकर) बिल्कुल नहीं, दरिद्रताको मनुष्य सहन कर सकता है और उसके मिटानेका भी प्रयत्न

कता है, किन्तु वृद्धावस्थामें क्या कुछ हो सकता है ?
स्था सघन बादलोंके समान युवतियोंके सुख रूपी सूर्यको
ः लिए ढक दिया करते हैं।

रामनाथ—समाज तो कमलाका बलिदान मांगता है।
समाज जो राक्षसके समान है, ऐसी ऐसी बालाओंकी आहूति
ता है।

शकुन्तला—हमारे देशमें स्त्रियोंके भक्षण करनेको यह
ज सदासे खड़ा है। यह दान-दहेजकी प्रथा गरीब कन्या-
ा बलिदान लेती है।

रामनाथ—तब ऐसे देशमें हमलोग पैदा ही क्यों हुए ?

शकुन्ता—हमलोग इसी देशके हैं इसके सिवा दूसरा कोई
नहीं। अब हम लोगोंको असली बात पर आना चाहिये।
ामझती हूं कि हमलोगोंको अब शंकरनारायणसे विवाह कर
का निश्चय कर देना चाहिए जबकि हम गरीब हैं।

रामनाथ—अभी तो तुम बिल्कुल इसके विरुद्ध थी।

शकुन्तला—नहीं, ऐसे संबंधमें जो बुराईयां होती हैं मैं
ं ही बता रही थी। किंतु असंभव बातको रोकनेमें असमर्थ
के कारण हम लोगोंको तैयार हो जाना चाहिए। जिस
ार मैंने अभी हालमे चार महीनेके बालकको मृत्युरूपी
सीको भेंट कर दिया है उसी प्रकार मैं चौदह वर्षीय
ाको वृद्ध शंकर नारायणको भी भेंट करनेको तैयार हूँ जो
एक जीवित मृत्यु है।

रामनाथ—अच्छा, तब क्या मैं शंकर नारायणको विवाह निश्चित करनेका पत्र लिख दूँ कि वह निमंत्रण पत्र भी छपालें।

हां, शकुन्तलाने कहा—कमला, मेरी प्यारी बेटी कमला, तेरा भाग्य बड़ा भयानक निकला, क्योंकि हम लोगोंके समान तू भी इस लोभी समाजमें पैदा हुई हो। ऐसा कहकर शकुन्तला फूट-फूटकर रोने लगी।

मां—मां आप न रोइये, ऐसा कहकर कमलाने दरवाजा खोलकर मां के आंसू पोंछे।

बच्ची, क्या तू जालीके छेदमेंसे सब बातें सुन रही थी? शकुन्तलाने भर्राई हुई आवाजमें पूछा। कमला लज्जित हो चुपचाप खड़ी रही। अच्छा, जब तूने सब सुन ही लिया है तब और कुछ कहना बाकी नहीं। ऐसा कहकर शकुन्तला घरके भीतर चली गई।

पन्द्रह दिनोंके पश्चात् रामनाथके घर बड़ी धूम-धामसे विवाह हुआ। नगरके प्रसिद्ध व्यक्ति ज्योनारमें आए। बड़ी धूम-धामसे बाजे बज रहे थे। चार दिनों तक रामनाथके घर विवाहकी मंगल गायन होते रहे। कमला और शंकरनारायणको विवाहमें बहुतसी चीजें भेंटमें आईं। आशीर्वाद और शुभ कामनाओंसे विवाह मंडप गुञ्जने लगा। शकुन्तलाका हृदय प्रसन्नतासे भर रहा था। इस समय शोकके चिह्न शकुन्तलाके

हृदयसे कूच कर गये थे। कमला सोने, मोती और हीरेके आभूषणोंसे लदी हुई बड़ी सुन्दर लग रही थी। उसकी सुकुमारता और सौंदर्य विवाहमें उपस्थित सज्जनोंको बड़ा ही मनोरंजक लग रहा था। सबके हृदयमें एक प्रकारका आन्दोलन हो रहा था। जब शकुन्तलाके पास कमला आई तब शकुन्तलाने पूछा—बच्ची ! क्या तूँ अपनेको पूर्ण सुखी समझ रही है ?

कमला—हां, आपने ठीक ही कहा था कि धनिक वृद्धकी अपेक्षा एक दरिद्र युवक कहीं अच्छा होता है। क्या यह बात बिल्कुल हृदयसे कही थी या बनावटी ? शकुन्तला लज्जित होकर कोई अच्छा उत्तर न दे सकी।

तब कमलाने कहा—हाँ माँ ! आपने सत्य ही कहा था किन्तु रूढियोंके दास आप और पिताजीके समान ही होते है। सकुन्तलाका हंसता और प्रसन्न मुख क्षणभरमें पीला और मलीन हो गया। जब कमलाके क्षीण आभाको देखा तो उसका हृदय दुःखमें व्याकुल हो उठा। एकदम करुण हृदयसे चिल्ला उठी। हम लोग इस पृथ्वी पर पैदा ही क्यों हुये थे।

कमलाने कहा—यदि पैदा हुए भी तो इस समाजकी दहेज प्रथा जो सबसे बड़ी सामाजिक बुराई है इसे उखाड़ फेंकना चाहिए। बनावटी प्रसन्नताको दिखाती हुई मातासे बेटी विदा हुई। यह जोड़ा कैसा अच्छा रहा ! किन्तु घृणाकी

दुःखभरी दृष्टिसे रामनाथ सन्नाटेमें आ गये। और सोचने लगे—हाय रे दहेजका भय !

छः महीने बीत गये। कमला शंकरनारायणके घरकी देख-रेख करती रही। उसकी दस संतानोंका बोझ भी कमला पर ही था। जिनमेंसे कुछ तो उससे भी बड़ी आयुके थे। कमलाके पति शरीरसे बड़े दुर्बल होते जाते थे। उसकी माताने जैसा वर्णन विवाहके पहले बताया था उससे कहीं अधिक उनका शरीर गिर चुका था। शकुन्तलाने शंकरनारायणको विवाहके सम्बन्धसे कुछ दिन पहले देखा था। डाक्टरी दवाई-योंके प्रयोगसे भी शंकरनारायणको यौवन प्राप्त न हो सका। उनकी वृद्धावस्था साक्षात् प्रकट होने लगी।

प्रतिदिन इनको तीन प्रकारकी औषधियां लेनी आवश्यक थीं—एक दमाकी दूसरी गठिया तीसरी पेट दर्दकी। वो चश्मा लगाने पर भी बड़ी कठिनतासे देख पाते थे। उनकी स्मरण शक्ति दिनों दिन क्षीण होती जा रही थी। बार-बार वो अपना चश्मा छडी कलम और तालीको भूल जाते थे। तब कमलाको सब चीजें खोजनी पडती थी। उनके करीब-करीब सब दांत गिर गये थे। और मुहमे बनावटी दांत लगे थे।

संवाद भेजनेका उनका आवश्यक दिनभरका कार्य था। इसमें भी वो अधिक सहायता कमलासे ही लेते थे। दमाकी बीमारीके कारण वो कमलाको रातभर जगाये रखते थे। कभी

भी तो खांसीसे इतना व्याकुल हो जाते थे कि जानकी अब ब पर पड़ जाती थी। कमलाको शंकरनारायणकी सुधरती बेगड़ती हालत देखकर आश्चर्य और पश्चात्ताप होता था। पश्चात् ह उनकी वृद्धावस्थाकी बीमारी पर हृदयसे तरस खाती थी।

रातदिन कमलाको भोजन बनाना और घरके सैकड़ों काम करने पडते थे। शंकरनारायण बड़ा ही लोभी प्रकृतिका मनुष्य था। उसने कमलाका विवाह होते ही महाराजको जो भोजन बनाता था निकाल दिया। कमलाको स्नेहके अभिप्रायसे चापलूसीके शब्दोंमें कहते—महाराज! तुम्हारे समान स्वादिष्ट भोजन नहीं बना सकता।

जब कभी शंकरनारायणको किसी प्रकारसे खर्चकी तंगी करनी पडती तो वो कमलासे बहाना कहते कि मेरा इस विवाहमें बहुत रुपया लग गया है। मेरे लड़के इतना खर्च करनेसे मना करते थे, तब मैंने उनको समझा दिया कि मैं ३ वर्षके भीतर सब तरफसे हाथ सकीर्ण कर इस खर्चकी पूर्ति कर दूँगा। किसीने मेरी ३ वर्षकी ही आयु बताई है।

कमला यह सुनकर सन्नाटेमें आ गई। यह सोचकर कि उसके पति ३ वर्षके अन्दर ही चल बसेंगे, कमलाके हृदयपर भारी चोट पंहुची, यद्यपि वह स्वयं उनकी बीमारीको जानती थी कि वह मुश्किलसे दो साल भी न काट पायेंगे। कमलाको सिवाय भाग्य पर भरोसा करनेके दूसरा चारा नहीं था जो

जवाहरात कमलाको चढ़ाई गई थी वह कमलाकी पहली लड़कीके ससुरालसे मंगाई गई थी, उन्हें वापस कर दिया गया।

कमलाके पास पिताके दिए गए आभूषण जो बहुत कम थे रह गए। कमलाकी माताके समझानेसे कमलाने शंकरनारायणसे अपने जवाहरातके आभूषणोंको देनेके लिए कहा जिसका उत्तर विचित्र पेचीले शब्दोंमें दिया। जवाहरातका पहनना व्यर्थ है। जो स्वयं सुन्दर है उसको इनकी आवश्यकता नहीं है, यह तो बनावटी शृङ्गार है इस कारण तुम्हारे सी परम सुन्दरीको इनकी आवश्यकता ही क्या है?

कमला—तुमने विवाहके दिन मुझे इतने गहनोंसे क्यों लाद दिया था?

शंकरनारायण—सामाजिक दृष्टिसे सबको संतुष्ट करनेके अभिप्रायसे। ओह! फिरसे खांसी आ गई, वो इस प्रकार खांसते रहे मानों मौत ही आ रही हो।

कमला—ओह। इनकी इच्छाके विरुद्ध कोई बात करनेसे इनका रोग बढ़ जाता है।

एक दिन शंकरनारायण कमलाको साथ लेकर रेल द्वारा कहीं दूरका सफर करनेको निकले। स्टेशन पर ये लोग उतरे नियत स्थानपर पहुंचनेके लिए। नियत स्थानपर पहुँचकर स्टेशन मास्टरको टिकट दिया तो उसने शंकरनारायणको परिचित होनेकी वजहसे पूछा—यह लडकी तो बडी चतुर है, क्या यह आपकी पोती है? यह सुनकर शंकरनारायण फेरमें

पड़ गए कि वो उत्तर क्या दें ? बिना उत्तर दिए क्रोधसे लाल पीले होकर कमलाके साथ बाहर निकल गए। इस घटनाके पश्चात् वो कभी कमलाको अपने साथ कहीं नहीं ले गए।

स्त्री-पुरुषका इतना घनिष्ट संबन्ध होते हुये भी उनका सम्बन्ध बनावटी भी न रहने पाता था। शंकरनारायण वृद्ध और बलहीन होनेके कारण कमलासे ऊपरी, प्रेमको दर्शानेमें असमर्थ थे। कमला भी ऐसे रोगी दुष्ट पतिको पाकर कभी अपनेको हर्षित न पा सकी। जब कभी शंकरनारायण कमलासे प्रेम करना चाहते थे तो वह उसे बुलाकर कहते—कमला ! मेरे पास आओ। कमला बिचारी भी आज्ञा पालना अपना कर्तव्य समझती थी, अतः हृदयसे जा लगती।

एक दिन शंकरनारायणने कमलासे कहा कि आकर हृदयसे लग जा। कमला बिचारी अपने मनको सदैव रोके रहती थी। इस समय न जाने कैसे उसे इनकी बीमारीका बिचार न रहा कि मेरे पतिदेव मृत्यु द्वारकी शैयापर पड़े हैं, उसने भीतरसे प्रेमके आवेशमें उन्हें हृदयसे लगाकर दबाया, इतनेमें ही शंकरनारायण चिल्लाने लगे। अरे, मरा, मरा, क्या मेरा दम घोटना चाहती है या पसलियोंको तोड़ना ?

बिचारी कमलाने लज्जित हो उन्हें छोड दिया। प्रेमके आलिंगनके फलस्वरूप इन्हे एक घंटे तक तेलका मर्दन करना पड़ा। कमला लज्जा और क्रोधसे भर गई, उसे अपने कुकृत्य पर बड़ा दुःख हुआ। कमला जीवित थी अतः उसे इच्छा न

होते भी नित्यक्रियाको सावधानीसे करना पड़ता था।

शंकरनारायणकी ५५ वर्षकी आयू पूर्ण होने पर सरक
नौकरी छूट गई और पेन्शन हो गई। इनकी इच्छा अभी अधि
दिन पूरा वेतन मारनेकी थी, अनेक प्रयत्न भी किये, कि
सब निष्फल हुए। वेतन बढ़नेकी अपेक्षा और भी कम होने
शंकरनारायणको बहुत चोट पहुँची। उनका मिजाज और
कटुक हो गया।

अब वो कमलाको दिनमें भी दुःखित करने लगे थे
कमलासे बातचीत करते हुए एक दिन सखीने पूछा—बह
इस बूढ़ेमें जिसको कि कमसे कम एक दर्जन रोग हैं आ
क्या गुण पाया कि ब्याह किया ?

कमला—बहन ! हम लोग भारतीय स्त्रियां हैं। य
बिना दहेजके विवाह नहीं हो सकता। हम लोगोंकी अप
सम्मति और पसन्दगीको कोई नहीं देखता, माता-पिता अप
आर्थिक दशाके अनुसार जैसे-तैसे वरसे शादी कर देते हैं
ऐसा विवाह बन्धन एक जुआका खेल है।

कभी-कभी कन्याओंको अपने जीवनसे भी हाथ धो
पड़ता है। मैं नहीं कह सकती कि सबके लिए यही बात ल
हो सकती है या नहीं, परन्तु सबसे बड़ा दोष जो मुझे दिख
देता है वह यह कि हम लोगोंको विवाहके लिए बाध्य हो
पड़ता है। यदि कोई आजन्म अविवाहित रहना चाहे तो वंश
धब्बा लगता है।

वंशका और घरका सत्यानाश हो जायगा ऐसा कहकर समाज और घरके कुटुम्बी लोग जैसे-तैसे जन्मांतर दुःख देनेवाले सम्बन्धोंको कर देते हैं। हां, बहन! आपने सत्य कहा है। ऐसी ही परिस्थिति है। हम लोग भी इसका कुछ सुधार नहीं कर सकती हैं।

इस समय शंकरनारायणने कमलाको पुकारा। कमला सखीसे विदा मांगकर जाने लगी तो सखीने पूछा—बहन, आप इनकी आज्ञाका पालन इतनी नम्रतासे क्यों करती है?

कमला—आज्ञा पालन करना ही मैं अपना धर्म और कर्त्तव्य समझती हूं। ऐसा कहकर वह शंकरनारायणके पास चली गई। नौ महीनेकी लम्बी बीमारी भोगनेके पश्चात् शंकर-नारायण चल बसे। शंकरनारायणने अपने पीछे कोई विल नहीं छोड़ा। उनके पीछे उनकी संपत्तिके अधिकारी उनके पुत्र हुए। यदि कमला अपने वस्त्राभूषणोंको त्यागकर घरमें भोजन आदि बनानेके लिए सहमत हो तो उनके सौतेले पुत्र घरमें रखनेको राजी थे।

कमलाकी पुरानी सखीने कमलाको ऐसी दुर्दशासे अपना जीवन निर्वाह करनेसे बचानेका बहुत प्रयत्न किया। उसने कहा—बहन, आपकी अवस्था अभी बहुत कम है। आप अपने जीवनको निरर्थक न बनाइये। जो होना था सो तो हो ही चुका है।

अब भी इस जीवनको उच्च और आदर्श बनानेका बहुत

समय है। आप यदि किसी महिला आश्रममें चली जांय तो वहां पर धर्मध्यानपूर्वक विद्या पढ़ सकती है। विद्याध्ययनसे बुद्धि बलका विकास होता है। इससे आप अपना और समाजके कई जीवोंका उपकार कर सकेंगी।

कमलाने कहा—सोचूंगी।

सखी—बहन, शोक है कि आप अपनी स्थितिको सुधारना नहीं चाहती। क्या यह सामाजिक भ्रम हृदय पर पत्थर है जो कि स्त्रियोंके गलेमें पड़ना आवश्यक है? इसे मिटाकर सुखी होनेकी चेष्टा कीजिए।

कमला—आपका कहना सत्य है किन्तु जन्मसे ही मेरी आत्माके कुचले जानेसे बलहीन और पराजय हो गई हूं और ऐसा करनेसे असमर्थ-सी हूँ। बिचारी कमलाका हृदय शोकसे भर गया।

बहन! इतने दिनोंतक गुलामीका जीवन बितानेके कारण मेरी शक्तियोंको सोर्चा लग गया है। मेरी स्वतन्त्र होनेकी इच्छा भी जाती रही। कृपया आप अपना कार्य कीजिए। संभव है कि आपका उपदेश मेरे जीवनको सुखी बना दे।

—विदुषी व्रजबालादेवी।
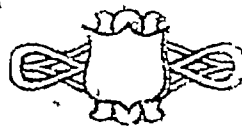
(६)

देवीदास

सेठजी प्रिये ! इतनी अतुल संपत्तिकी स्वामिनी होकर भी इतनी उदास क्यों है ? क्या किसीने कुछ अनुचित शब्द कहे हैं या स्वास्थ्य ठीक नहीं है ?

सेठानी—नाथ ! मेरी उदासीका कारण पूछकर आप क्या करेंगे ? मेरा स्वास्थ्य अच्छा है, मुझसे झगड़ा कौन कर सकता है ? मेरी मनोव्यथा दूर करनेमें कोई सहायक नहीं हो सकता। दैव ही मेरे विपरीत है, दूसरेका तो कहना ही क्या है।

सेठजी—आपका मुख सूखा देखकर मेरा हृदय फटा जा रहा है, कारण शीघ्र बताना पड़ेगा।

सेठानी—प्राणनाथ ! सन्तान विहीन मनुष्यका होना संसारमें न होनेके बराबर है। हम लोगोंके पास अतुल धन, सम्पत्ति, भोग-विलासकी सामग्री होते हुये भी सब गंधहीन पुष्पके समान हैं। बिना सन्तानके मेरा जी घरमें एक क्षण भी नहीं लगता। सब वस्तुएं बुरी लगती हैं, कहिए क्या करूं ?

सेठजी—इतना दुःखी होनेका क्या काम है, यदि हमारे भाग्यमें ही सन्तान विहीन होना बदा है तो फिर करना ही क्या है ? जब हमारे पास धन है तो तुम अच्छेसे घरका लड़का गोदमें ले सकती हो। तुम्हारे और मेरे हृदयके

सब चाव पूरे हो गायेगें। मैं देख रहा था कि शायद दैव हमारा सहायक हो जाये और हमें सन्तानकी प्राप्ति हो जाय, किन्तु अब ऐसा होना असंभव जंचता है।

सेठानी—जो हो, मैं इस घरमें अकेले रह कर मक्खी मारना नहीं चाहती। यदि वास्तवमें आप मुझे प्रेम करते हैं तो इस शोकाकुल हृदयको सुखी बनानेकी चेष्टा कीजिए।

लीलावती—कहिए बहन, आप इतनी उदास क्यों है?

सेठानी—क्या कहूं बहन, आप बिना बाल-बच्चेके दिन-रात घरमें जी नहीं लगता और न कुछ अच्छा ही लगता है।

लीलावती—अरी बहन, तुम तो बड़ी भाग्यशाली हो॥ मामूली हैसियतके मनुष्य भी अपने लाड़-चाव गोद लेकर बच्चे पर पूरे कर लेते हैं। आपकी तो बात ही और है। एक अच्छा लडका लेले, घर भर जायगा।

सेठानी—यह तो ठीक है, परन्तु बडे लड़के लेनेसे वे प्रेम नहीं करते, अपना नहीं समझते, अतः भविष्यमें भले-बुरे होनेका डर रहता है। यही सोचकर मेरी हिम्मत नहीं पड़ती। क्या करूं, कैसे दिन कटेंगे कुछ समझमें नहीं आता।

सेठजी—तुमने एक बात सुनी है कि नहीं? आज चार-पांच मनुष्य मेरे पास आये थे। उनमें एक दो बडे बडे रईस तथा समाजसेवी लाला रघुनन्दनप्रसादजी भी थे। बहुतसी

इधर-उधरकी बातें होनेके पश्चात् कहने लगे—सेठजी ! आपकी तो कोई सन्तान है नहीं अपने धनको किसी अच्छे कार्यमें खर्च कीजिए।

सेठानी—क्या ! किसीको औलाद नहीं होती तो अपना धन फेंक देता है ? उन दुष्टोंको हमारे पैसेसे क्या मतलब है, हमारा जी चाहेगा, सो करेंगे, चाहे फेंके, चाहे लड़का गोद लें ले, इससे दूसरोंको क्या पड़ी है, वे लोग परोपकारी बनते हैं, दूसरोंके रुपयोंसे तमाशा देखना चाहते हैं। अपनी गाँठ खोलें तब पता चले कि पैसा लगाया कैसे जाता है।

सेठजी—आइये बाबू रघुनन्दनप्रसादजी अच्छे तो हैं ?

रघुनंदनप्रसाद—कृपा आपकी।

सेठजी—कहिए कैसे इधर आना हुआ ?

रघुनन्दन०—ऐसे ही, आज टाऊन हॉल में जो सभा होनेवाली है मैं उसीमें जा रहा था। सभापतिका आसन श्रद्धेय पंडित मदनमोहन मालवीयजीने लिया है। समय अभी नहीं हुआ है। सभा आठ बजेसे होगी, अतः आपके पास चला आया।

सेठजी—आपने बड़ी कृपा की कि अपना अमूल्य समय इस दासके पास आनेमें लगाया। सभा कैसी हो रही है ?

रघुनंदनप्रसाद—क्या आपको मालूम नहीं है कि भूकंपसे हजारों मनुष्य धन, जन विहीन हो गये हैं, उनके पास रहनेको छाया नहीं, खानेको दाना नहीं, वस्त्रका एक

टुकड़ा पहननेको नहीं है, तथा बनारसमें जो हिन्दू विश्वविद्यालय है उसमें भी कई योजनाएं हो रही हैं, इन्हीं कारणोंसे एक वृहत् सभा की जा रही है। जो धनी मनुष्य हैं वे सहायता देते हैं। लाखों पीड़ितोंको सहायता दी जायगी।

सेठजी—क्यों भाई, ऐसे कार्योंमें धन लगानेसे किसी खास मनुष्यका नाम तो होता नहीं, फिर पैसा लगानेसे भी क्या फायदा है? अपना धन भी लगाओ और कुछ नाम भी न हो।

रघु०—सेठजी, ऐसा आप कभी न सोचिए, भलाईमें जब धन लगता है तो नाम गामका क्या करना है? संसारमें धन पानेका तो यही सुख है कि वह अच्छे कार्योंमें लगाकर सार्थक बनाए। नाम तो बड़े२ मंडलेश्वर चक्रवर्तियोंका नहीं रहा, फिर हम आप जैसे मनुष्योंकी क्या बात है। कहिए आपकी क्या सलाह है? देखिए, एक अच्छी रकम निकाल दीजिए, आपका बड़ा नाम होगा। सदाके लिए यह दान अमर रहेगा।

सेठजी—भाईसाहब! धन कमाकर इस तरह राहजमें दे देना सरल बात नहीं। हम लोग मामूली आदमी हैं। हमपर ऐसा धन कहां है जो राजाओंकी तरह बड़ी बड़ी रकम लगा दें, जो कमाते हैं सो खाते हैं।

रघुनंदनप्रसाद—सेठजी! जब आप जैसे अमीरकी यह दशा है तो गरीब बिचारे क्या करें? दान करनेमें हृदयकी

उदारताकी आवश्यकता है। देखिए एक मजदूर जो बिचारा आठ आना रोज कमाता है वह भी दो पैसे पेट काटकर बचा लेता है। वह ऐसे ऐसे महत् कामोंमें लगा देता है, परन्तु मुझे आपके मुंहसे ये शब्द सुनकर बड़ा ही आश्चर्य हुआ है। सुना है आप पुत्र गोद लेना चाहते हैं।

सेठजी—अरे भाई, जो लड़का गोद न लेंगे तो बुढ़ापेमें सेवा कौन करेगा यही ख्याल है।

रघु०—अरे भाई साहब, अब यह जमाना नहीं है, अपने पेटके बच्चे तो सेवा करते ही नहीं. भला गोद लिया हुआ लड़का क्या करेगा? लाखों उदाहरण मैं आपको दे सकता हूं कि सेवा तो दूर रही गोद ली हुई संतान विशेष कर निकम्मी निकलती है। धनका सुरक्षित रहना भी कठिन हो जाता है। सब नष्ट कर कुलका नाम डूबा देता है। कोई बिरला गोद लिया हुआ लड़का ही सुयोग्य निकलता होगा।

सेठजी—महाशय, आप जो कहते हैं मैं नहीं मान सकता। आपके कहनेका मतलब है कि कुछ न करके सब पैसा दान दिया जाय और स्वयं दरिद्री होकर मरें।

रघु०—वाह, भाई साहब यह आपने खूब कहा, क्या जो दान करते हैं वे दरिद्री होकर मरते हैं। अरे वो तो संसारमें सदैवके लिए अमर कीर्ति पा लेते हैं। उनकी धनराशि तो यहां-वहां उभय लोकमें बढ़ती है। धनको सत्कार्यमें

लगानेसे बढ़कर कोई उत्तम मार्ग ही नहीं है। मेरे विचारोंसे आपके विचारोंमें बड़ा मतभेद है।

सेठजी—भाई साहब, जो कुछ भी हो अपने सामने धनसे ममत्व छोड़ना सामान्य बात नहीं है। मुझे तो एक पुत्र गोद लेनेकी तीव्र इच्छा है। आपकी नजरमें कोई हो तो बताईये।

रघु०—राम-राम, ऐसी ऐसी बातें मेरी सामर्थ्यसे बिल्कुल बाहर हैं। भला क्या मैं दलाली करता हूं जो लड़का गोदी लेना बता दूँ?

सेठजी—अच्छा भाई, आप नाराज न होइये। जैसी आप लोगोंकी सम्मति होगी किया जायगा। क्या मुझे भी सभामें ले चलेंगे?

रघु०—भला वहां हजारोंकी संख्यामें लोग उपस्थित होंगे आपको जानेमें क्या हर्ज है। अच्छी बातें मनुष्यको सदैव श्रेष्ठ मार्ग ही दिखाती है। चलिए बड़े हर्षकी बात है, वहां बड़े बड़े व्याख्यान सुननेको मिलेंगे।

★

सेठानीजी—कहिए आज तो बड़ी देर कर दी, कहां चले गये थे जो अब आधी रात होने आई।

सेठजी—क्या तुमने नहीं सुना यहां एक सभा थी, वहीं गया था। बडे अच्छे-अच्छे व्याख्यान सुने, ऐसी-ऐसी बातें सुनीं जो कभी स्वप्नमें भी नहीं सुनी होगी।

सेठानी—सुन तो लिया, विशेष बड़ाईके नगाडे मत

पीटो । आज कल सभा काहेकी रह गई, खाली रुपया बटोरना रह गया है । जब चन्दा करना हुआ सभा कर ली । कहो चंदा क्या दे आये ?

सेठजी—अरे भाई, वहाँ तो लाखोंकी बातें थीं, मेरी हैसियतके मनुष्योंने तो हजारोंका दान दिया था ।

सेठानी—भला आप क्या दे आये सुनूं तो सही ।

सेठजी—अरे भाई, मैं तो एकसौ एक दे रहा था परन्तु बहुतसे आदमी पीछे पड़ गए, आखिर पांचसौ देने पड़े ।

सेठानी—बस मैं तो जानती ही थी कि वहाँ बिना मुड़े न आये होंगे । मैं जो कहती हूं उसका कुछ उपाय न करना । सब पैसा दे लेकर बरबाद कर डालो ।

सेठजी—भला थोड़ा-बहुत देनेसे अपना क्या बिगड़ता है ? मैं स्वयं ही चिंतित हूँ । किन्तु मौका देख रहा हूं । कितने मनुष्योंसे कह रखा है, कोई अच्छा-सा लड़का हो तो दिला दो ।

*

सुभद्रा—सेठानीजी ! कहिए क्या कर रही है, तबियत तो अच्छी है ?

सेठानी—हाँ बहन, मुझे अकेलीको क्या भो ? चुगे थोड़े जाते हैं, बैठे-बैठे जी घबराया करता है ।

सुभद्रा—क्यों, आप लड़का गोद क्यों नहीं ले लेती हैं ? देखिए अभी हालहोमें मेरी पडोसिनने एक नवजात शिशु गोद

ले लिया है। उसके घर तो इस समय बड़े भारी मंगल मनाये जा रहे हैं। चारों तरफ धूम मची है कि उसीको लडका हुआ है।

सेठानी—यह कैसे हो सकता है, इतना छोटा बच्चा अपना कौन देगा?

सुभद्रा—बहूजी! आप बड़े घरकी स्त्री है आपको क्या मालूम है। आजकल अच्छे२ घरोंमें बडा अन्धेर हो रहा है जब किसी विधवा बहू-बेटीका ऊँचा-नीचा पैर पड जाता है तो उसे पैदा होते ही किसीको दे देते हैं। अक्सर ईसाईयोंसे अस्पतालमें ले लेती हैं और पालकर उसे अपना सजातीय ही बना लेती हैं। कोई अच्छे घरका भी लडका पैदा हुआ होता तो उसे नष्ट भ्रष्ट कर देती हैं।

क्या कहूँ बहूजी, संसारमें बडा अन्धेर छाता चला जा रहा है। बड़े घरोंमें ऐसा हो रहा है। तू मेरी न कह मैं तेरी न कहूं बस इतना ही पर्दा है।

सेठानी—सुभद्राजी, क्या मुझे भी कोई नवजात बालक दिला सकती हो? जो आप कहेगी मैं देनेको तैयार हूं आपको खुश कर दूँगी। मैं तो तीन चार सालका बच्चा गोद लेना चाहती थी, परन्तु जब हालका ही बच्चा मिल सकता है तो इससे बढ़कर भला क्या हो सकता है? मैं आपके पैर पडती हूं, आप मेरा ख्याल करके ऐसा मौका जरूर देखती रहिए। कभी तो दैव अनुकूल होगा।

सुभद्रा—सेठानीजी, मेरी आदत कहनेकी कुछ नहीं है। यह बात हाथकी नहीं है मौका देखती रहूंगी। जब कभी ऐसा होगा आपको खबर दूँगी।

सेठानी—बहन, मैं तुम्हारी आजन्म आभारी रहूंगी। देखिए मुझपर तर्स करना न भूलना; नहीं तो मेरा जीवन ही नष्ट हो जायगा।

*

सेठजी—ओहो, आज तो आप बड़ी प्रसन्न दिखाई दे रही हैं, आखिर बात क्या है? समझ नहीं आती क्या कोई नवीन शुभ सूचना है?

सेठानी—अजी, आपको तो किसी प्रकारसे चैन नहीं है, जरा उदासी हो तो चैन नही और प्रसन्नता हो तो चैन नहीं। आपको मालूम नहीं, कल सुभद्रादेवी आई थीं। उससे एक नया समाचार सुना है।

सेठजी—(बड़ी उत्सुकतासे) क्या बात है शीघ्र बताओ।

सेठानी—वे कहती थी कि आजकल अच्छे-अच्छे घरके मनुष्योंके दर्शन हाल ही का उत्पन्न बालक गोद लेनेको मिल सकता है। अभी हाल ही में उनकी पड़ोसिनने एक लड़का गोद लिया है। मैंने उनसे बहुत आग्रह किया है कि मुझे भी दिला दें।

सेठजी—राम राम, तुम बड़ी बेसमझ स्त्री हो। यह नहीं जानती कि जो बालक अपने माता पितासे पैदा न हुआ हो

घरमें आकर वह वर्णशंकर हमलोगोंके कुलमें भी दाग लगा देगा। ऐसी संतानसे न लेना ही अच्छा है।

सेठानी—वाह आप तो बिना सोचे-समझे ही किसी बातका इन्कार कर देते हैं। यह नहीं समझते कि बडे घरका लड़का प्रारम्भसे ही हमलोगोंको अपना निज माता-पिता समझेगा। और किसीको लेंगे तो वह हमें अपना नहीं समझेगा। दूसरी बात यह कि हम जैसा चाहेंगे इनके ऊपर प्रभाव पड़ सकता है। जन्मसे ही हमें देखेगा तो वह बिगड़ कैसे सकता है। और जो लोग लेते हैं क्या वे पागल हैं? उनको अपने हित अहितका क्या जरा सा भी ख्याल नहीं है?

सेठजी—अच्छा बताओ कि तुम्हें कैसे और कहांसे मिल सकता है? कौनसा बडे घरानाका बच्चा तुझे दे देगा? गरीब भले ही देदें, जिसके पास खानेको न होगा वही दे सकता है।

सेठानी—आप समझ तो रहे नहीं हैं, मैं क्या कहती हूँ कि बडे घरका आदमी अपनी औलादको यों ही दे देगा? सुभद्रादेवी कहती थीं कि बहुतसे घरोंकी विधवा बहू, बेटियोंके अज्ञानतासे गर्भ रह जाते हैं। उनको घरमें समाजके सामने कैसे रख सकते है। इसलिए छुपाकर बहुधा देश-विदेश जाकर अपना प्रसव अस्पतालोंमें कराकर बच्चेको योंही दे देते हैं। प्रायः अस्पतालकी नर्सें ले लेती हैं और पाल लेती है। वे क्रिश्चियन हो जाते हैं, कभी गरीबोंके पाले पड

जाते हैं। कहनेका अभिप्राय उनका जीवन कैसा बने कोई नहीं कह सकता। जैसे मनुष्यके पाले पडते हैं वैसे ही बनते हैं।

सेठजी—इसी तरहका बालक यदि तुम भी लोगी तो समाजमें क्या मुंह दिखाओगी ? कौन वर्णशंकर सन्तानका सम्मान करेगा ?

सेठानी—आपका यह कहना ठीक है परन्तु सबके सामने यह घोषणा करनेकी क्या आवश्यकता है कि हमने लडका गोद लिया है। यदि यही कहा जाय कि पैदा हुआ है तो क्या हर्ज है ? तब तो कोई दूसरेका भला-बुरा नहीं सोचेगा।

सेठजी—हां, यह बात हो सकती है। यदि ऐसी चाल चलाई जाय कि सबको यही बिश्वास हो जाय कि सेठानीके पुत्र उत्पन्न हुआ है तो फिर समाजमें नाक ऊंची रहेगी, नीचा न देखना पडेगा।

★

आज प्रातःकालके समय सेठजीके घरपर बडी भारी धूम मची है। बाजे बज रहें हैं, लोग प्रसन्नतापूवक इधर-उधर दौड-धूप कर रहे हैं। न जाने क्या बात है समझ नहीं पडती।

भोलानाथ—अरे भाई लल्लू ! आज सुना है कि सेठजीको लडका हुआ है, भाई इतने दिनों बाद दैवने भी उनकी सुनली है। सन्तानके लिए बड़े भारी उत्सुक थे। बिचारे गोदी लेना चाहते थे सो स्वयं ही अपनी औलाद हो गई।

लल्लू—भाई साहब मुझे तो इसमें कुछ दालमें काला

मालूम होता है। अवश्य कुछ भेद है। देखिए धीरे-धीरे खुलेगा।

सेठजी—मुनिमजी! तार सब जगह बच्चेके होनेके देदिये या नहीं?

मुनिम—सरकार! तारघर खुलते ही तार चले गये। भला कभी ऐसी भूल हो सकती थी? किसी प्रकार तो यह दिन दिखाई दिया फिर भी ऐसा प्रमाद कैसे हो सकता था?

सेठजी—दस्तूतनकी सब तैयारी अच्छी तरहसे होनी चाहिए। इंतजाममें कोई गड़बड़ी न हो। भाइयोंकी ज्योनार करनी होगी। सब सामान खूब बढ़िया होना चाहिए। देखो, नाक न कटने पाये। यह दिन बड़े भाग्यसे देखनेको नसीब हुआ है। मै नहीं कह सकता कि मेरे हृदयमें कैसा हर्ष हो रहा है।

मुनीम—सेठजी आपकी आज्ञाकी देरी है। किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं हो सकती।

सेठजीके घर ब्रह्मभोज हो रहा है, संध्याको भाईयोंका जीमन होगा। सेठजी गद्दी तकिए लगाए बड़े गम्भीर भावसे आगन्तुक व्यक्तियोंके आदर सत्कारमें लगे हुए हैं। स्त्रियोंकी भीड़ आ जा रही थी। मंगल गायन हो रहे हैं। सेठानीको सब बधाई दे देकर प्रसन्न कर रही हैं। कोई बच्चेको देखती हैं

हैं और कहती हैं कुछ-कुछ सेठजीकी उनहार आती है, कोई कहती नहीं मांकी झलक है।

★

सेठानी—देवदासकी वही पुजवानी चाहिए क्योंकि अब वह पांच वर्षका हो चला है, सुना है कि पांचवे वर्ष बच्चोंको विद्यारंभ कराना चाहिए।

सेठजी—अभी ऐसी जल्दी क्या पड़ी है, सारी उमर पड़ी है पढ़ लेगा। अभी अबोध बालक है खेलने क्यों नहीं देती?

सेठानी—खेलनेकी क्या मनाही है, लेकिन पढ़ने भी तो बैठाना चाहिए। मेरी इच्छा है कि बड़ी धूमधामसे देवीदासका विद्यारम्भ कराया जाय।

सेठजी—क्या करनेका विचार है?

सेठानी—मेरी यही इच्छा है कि भाई-बिरादरीमें अच्छे बड़े-बड़े बर्तन बांटे जांय, खाना पीना भी किया जाय। जो इसको प्रारम्भ कराये उसे दक्षिणा रूपमें कुछ दिया जाय।

सेठजी—जो तुम्हारी समझमें आवे, मुनिमजीको बुलाकर सब फहरिस्त लिखा दो, सब बन्दोबस्त हो जायगा। देवीदास अच्छे मुहूर्तसे पढ़ने बैठ गये। एक पंडितजी रोज पढाने आते थे। देवीदास उनका नाम सुनते-ही घरमें छुप जाता था।

पंडितजी—अरे, ओ लल्लू पढ़नेको निकल। सेठजी लल्लूको बुला दीजिए।

सेठजी—ओ बेटा देवी आ जा, तेरे पण्डितजी तुझे बुला रहे हैं। देखो न कबसे खड़े हैं।

देवीदास—ऊँ ऊँ आज नहीं पढ़ूंगा। बाबूजी, श्यामसुन्दर आया है उसके साथ खेलूंगा।

सेठजी—भाई पण्डितजी, मैं देवीका जी नहीं दुखाना चाहता, अतः आज उसे क्षमा कर दीजिए, कल आइयेगा तो पढ़ेगा।

देवीदास पंडितजीको चकमा देकर श्यामसुन्दरके साथ सुनारके पास खेलनेको चला गया। श्यामसुन्दरके घर बहुतसे गली-मुहल्लेके लड़के इधर उधरसे इकट्ठे हो जाते थे। आपसमें खूब खेलका रंग जम जाता था, कभी गोली टीप, कभी तास और कभी गिली-डंडा। देवीदास जब दस वर्षके हुए तब सेठजीने सोचा कि स्कूलमें भरती करादें तो पढ़ाई अच्छी चलेगी।

सेठजी—बेटा देवी! मेरा मन, तुझे स्कूलमें भरती करवा देनेको चाहता है, बता रोज स्कूल जाया करेगा न? वहां नागा करनेसे जुरमाना लग जाता है।

देवीदास—पिताजी! जुरमाना कैसा होता है?

सेठजी—बेटा। स्कूलोंका नियम है कि जो विद्यार्थी नागा करता है, रोज स्कूल नहीं जाता, उसे सजामें कुछ रुपया देना पड़ता है, इसीको जुरमाना कहते हैं।

देवी०—बाबूजी मैं रोज जाऊंगा। स्कूलमें भेज दीजिए।

देवीदास रोज स्कूलमें आने जाने लगा। वह तीसरी कक्षामें भर्ती हुआ।

सेठजी—क्यों देवीदास! स्कूल कैसा लगता है?

देवी०—बाबूजी! बडा अच्छा लगता है, बहुतसे लड़के आते हैं और जो याद नहीं करते उन्हें सजा मिलती है।

सेठजी—तुम याद करते हो या नहीं?

देवी०—बाबूजी! मैं तो याद करके जाता हूँ। मुझे मास्टरसाहब बहुत कम पीटते हैं।

सेठजी—अजी सुनो तो! तुम्हारा देवी अब पढ़ने लग गया है। अब बहुत कम खेलता है।

सेठानी—मेरा देवीदास बुरा थोड़े ही होगा जो न पढे, वह तो खूब पढ़ेगा, देखना कितना कमावेगा। और भी कुछ सुना है या नहीं? औरतें मुझे बडा तंग करती हैं कि देवी०का विवाह कर दो। न जाने कैसा समय आये।

सेठजी—हां, मुझे भी वेटीवाले जन्म-पत्री ला लाकर बड़ा तंग कर रहे हैं। मैंने तो तुमसे इसलिए नहीं कहा था कि तुम मेरे सिर हो जावोगी।

सेठानी—आपकी अभी करनेकी इच्छा न हो तो ठीक तो कहीं कर लेना चाहिए। नहीं तो समय पर मालदार घर व अच्छी लड़की शायद न मिले।

सेठकी—अजी देवीके लिए एकसे एक घरवाले चरणोंमें पड़नेको तैयार हैं, मिलना क्या कठिन है। परंतु मेरी इच्छा

थी कि एन्ट्रेंस पास कर लेता तो अच्छा था फिर विवाह किया जाता।

सेठानी—आपको तो पास करानेकी लगी है और मुझे नन्हींसी बहूका मुंह देखनेकी अतीव उत्कंठा लगी है। यदि देवीके पास होनेकी बात देखी जायगी तो बहू भी तो ऊंटनीसी मिलेगी। वह क्या मेरा आदर करेगी, क्या मेरे हृदयके हौंसले बढ़ायेगी?

सेठजी—जो इच्छा हो करो, देवी पर तुम्हारा तो पूरा अधिकार है। संभव है आगे बढ़ न सके।

सुभद्रादेवी—कहिए सेठानीजी आपके लाड़ले तो अच्छे हैं न?

सेठानी—आपकी कृपासे अच्छा ही है। बहन, आपने जो मेरा उपकार किया है उसे आजन्म नहीं भुलूंगी। मेरे सुखोंका कारण तो तुम्हारी दया है।

सुभद्रा—सेठानीजी ऐसा न सोचिए, जो होनहार होता है, वह होकर ही रहता है, इसमें मेरी ही क्या कृपा है। देवीके भाग्यसें आपके घरका ही दाना-पानी बदा था।

सेठानी (एकांतमें ले जाकर)—हमारी बात कहीं खुली तो नहीं है?

सुभद्रा—नहीं, यहांके सब लोग तुम्हारा ही पुत्र समझते हैं, देवीबाबूकी मां कभी-कभी इसे देखनेकी इच्छा मुझसे प्रकट

करती है। मैं आप जानती हूँ उसे वहींका वहीं दबा देती हूँ, इसलिये उसकी हिम्मत नहीं बढ़ती। कहीं उसका आना जाना आरम्भ हो गया तो असलियत छुप नहीं सकेगी। हमने तो सबका मुँह हजारोंकी थैली लगाकर बन्द कर दिया था। बहूजी आप इस बातसे तो निश्चिंत रहिए, मेरा कार्य ऐसा वैसा नहीं होता।

देवी—माँ ये कौन हैं जिनसे आप बातें कर रही है।

सेठानी—बेटा यह तेरी मौसी है, सुभद्रादेवी इनका नाम है, इन्हे तू मौसी कहना।

सेठजी—आज कई जन्मपत्रियोंमें देवी की सहारनपुर-वालोंकी बेटीसे बहुत अच्छी बनी है, बहुतसे गुण मिले हैं, मेरी इच्छा तो करनेकी हो गई है, तुम्हारी क्या सम्मति है?

सेठानी—भला जब घर लखपति है, लड़की छोटी और सुन्दर है, उधरका देन-लैन भी अच्छा होता है, मेरा घर भर जायगा। अवश्य कर लीजिए। सच कहिए मुझे धोखा तो नहीं दे रहे है?

सेठजी—भला कभी ऐसा हो सकता है? घरेलू बातोंमें धोखा देनेकी क्या बात है?

ला० गिट्ठनलालकी सुपुत्री कान्तिदेवीसे देवीबाबूका शुभ लग्न होना निश्चय हो गया।

सेठजीके घर जोरोंसे विवाहकी धूम मचने लगी। बम्बई,

कलकत्ते तथा काशीसे माल आने लगे। सेठ, सेठानी दोनों पुत्र विवाहके हर्षमें अंधे सरीखे हो गये। उनको यह ज्ञान न रहा कि हमारा कितना द्रव्य लग रहा है। महफिल सजने लगी, भांति-भांतिके रंग तमाशोंके साधन एकत्रित करनेकी चेष्टा की गई।

सेठानी जी अपनी सुन्दर बहु का कोमल मुख देखकर फूली न समाती। घरमें सभी हर्षित थे। विवाह सानन्द समाप्त हो गया। सेठजीका लगभग पचास हजार रुपया पुत्र-विवाहमें लग गया।

सेठजी—बेटा देवी, अब पढ़ने कब जाओगे ? स्कूलमें कई दिनोंका नागा हो चुका है। अधिक नागा करनेसे नाम कट जायगा।

देवी—बाबूजी कट जाने दीजिए। अब मेरी पढ़नेकी इच्छा नहीं है। अब कोई रोजगार करा दीजिए। उसे ही करूंगा।

सेठजी—अरे यह क्या, कमसे कम दस क्लास तो पढ़ले, विना इतना पढ़े किसी भी रोजगारमें बुद्धि नहीं चल सकती।

देवी—बाबूजी, मैंने तो स्कूल न जानेका पूरा पूरा निश्चय कर लिया है। इससे मैं आपकी आज्ञा न मानूंगा। और आप जो भी कहें मुझे सब स्वीकार हैं।

सेठजी—(माथे पर हाथ रखकर) मैं तो पहले ही

कहता था कि विवाह करनेसे इसका सत्यानाश हो जायगा। यह नहीं पढ़ेगा परंतु यह सब इसकी मांने किया। उसे ही विवाहकी जल्दी पड़ी थी। अभीसे घर बैठकर क्या करेगा?

सेठानी—बेटा देवी, तू पढ़ता क्यों नहीं? स्कूल नहीं जाता तो घरमें मास्टर रख दूँ; तेरे लिए रुपयेकी कमी थोड़े ही है। जो कहे सो हाजिर है।

देवी—मां, मेरा मन अब पढ़नेमें नहीं लगता है। मैं अब रोजगार करूंगा।

सेठानी—तेरी इच्छा; मैं क्या कहूं तू जान, तेरे बाबूजी जानें। घरमें बैठे वृद्ध मुनीमजी सब बातें सुन रहे थे। धीरेसे गुनगुनाकर कहने लगे—"भुसमें आग लगाय जमालो दूर खड़ी" लड़केका सत्यानाश करके अब बहूजी कह रही हैं कि तू जान, तेरे बाबूजी जाने। वाहरी दुर्बुद्धि! ये ही तेरे लक्षण हैं। कहीं बाबू साहब पूरे-पूरे जेंटिलमैन न बन जाय। सबरी संपत्ति चार दिनकी भी नहीं हो सकती।

देवीदयालके दोस्त लोग धीरे धीरे घरपर आने-जाने लगे। घंटों गर्मीके दिनोंमें खसकी टट्टी और पंखेके नीचे सब हा-हा हू-हू करते थे। कभी ताश तथा कभी अन्य खेलोंकी बाजी उड़ती थी। कभी देवीबाबू ही घरसे गायब हो जाते थे। दिनभर दोस्तोंके यहां पडे रहना और आराम करना। धीरे

धीरे दिनसे रात भी गायब रहने लगे। सेठानीजीकी चिंता बढ़ने लगी।

सेठानी—मैं देखती हूं देवी बड़ा बेकहल होता जाता है। अब तो घरसे रातकी रात और दिनभर गायब रह जाता है। कारण पूछती हूं तो बहाना बना देता है। ज्यादा तर्क करती हूँ तो सामना करने लगता है। मैं तो बड़ी हैरान हूं, इसे हो क्या गया है ?

सेठजी—यह सब तुम्हारी करनीका फल है। नन्हा-सा भोला पढ़ते-लिखते लड़केका जन्म बिगाड़ दिया।

सेठानी—हायरे भगवन्! मैंने क्या किया? बेटीवालोंके तगादोंके मारे तो नाकमें दम था। होता कैसे नहीं ?

सेठजी—पढ़ना तो न छूटता, बुरी चालोंकी आदत पड़ गई तो सिर पकड़ कर रोओगी।

सेठानी—जमाना ही बदल गया। जलदी विवाह करनेसे तो लड़के बिगड़ने नहीं पाते! मन घरमें फँस जाता है।

सेठजी—तुम मेरे कटे दिल पर नमक मत छिड़को। मेरे सामनेसे हट जाओ।

सेठानी—लो अच्छा, मैं तो हटी जाती हूँ, बहूको तो बुला लो, उसके आनेसे ये घरमें तो रहने लगेगा। अब तो गौना करने लायक स्यानी हो गई होगी।

सेठजी—जो इच्छा हो करो, मैं कुछ नहीं कहता ।

शुभ मुहूर्त दिखाकर देवीबाबूका गौना होना निश्चित हो गया । कांतिदेवी घर पर आ गई । सासके लिये बहुत सा माल लाई, देवीबाबूको भी बहुतसे रुपये मिले ।

सेठानी—देवी, आज रातभर मैं तुझे खोजती रही कहाँ रह गया । यह क्या बात है? घरमें बहू अकेली पड़ी रही आखिर मैं ही कमरेमें सोई रही कि डरे नहीं ।

सेठजी—अजी तुमने कुछ नई बात सुनी है या नहीं ?

सेठानी—क्या ?

सेठजी—मैंने सुना है कि वह देवी दुष्ट कुछ पीने भी लगा है, और भी कुसंगतमें पड़ गया है । यही कारण है कि रात दिन घरसे बाहर रहता है । घरमें आई हुई बहूका भी उसे ख्याल नहीं है । समझ नहीं पड़ता कि उसे रास्ते पर कैसे लाया जाय ?

सेठानी—हाय ! आप क्या कह रहे हैं ? क्या यह बात वास्तवमें सच्ची है ? ओहो, मैं समझी । इसीलिए वह दुष्ट मुझसे रुपया मांग मांग कर ले जाता था । जब कारण पूछती तो सैकडों बहाने बना देता । यदि मुझे पता होता तो मैं ऐसा कभी नहीं करती ।

अब हाय-हाय करनेसे क्या होगा ? अपनी करनी पर पछताओगी तो क्या बदला जाता है ? जैसा किया वैसा भोगो। आज एक और नई बात हुई है। बाबू साहबको जब गद्दीसे मनाई होनेके कारण रुपया नहीं मिला तो पांचसौ लेकर हजारका हैंडनोट लिख आये हैं। वह आदमी आज कोठी पर रुपया लेने आया था। न जाने यह सपूतराम हमको भीख मंगा देगा या भूखो मारेगा।

कांतिदेवीका कमल-सा प्रफुल्लित मुंह पतिकी दशा देखकर सूखने लगा। वह लकड़ीके समान हो गई। जब कभी पतिदेव घरमें आते तो सुरापानमें मस्त हो बेहोश पड़ जाते, मुंहसे भी दुर्गन्ध निकलती थी। यह सब दृश्य देखते देखते कांतिदेवीका शरीर पिंजरवत् हो गया। उसने निश्चय किया कि ऐसे पतिके साथ रहनेकी अपेक्षा पिताके घर चले जाना ही अच्छा होगा। रात-दिन कुकृत्य देखनेसे तो बचूँगी।

सेठानी धाड़ मार-मारकर रोने लगी। कोई ऐसा उपाय करिए जिससे देवी सुधर जाय।

सेठजी—मैं क्या कोई भी उपाय करनेसे बाकी हूं, या करना नहीं चाहता, परन्तु तुम्हारा सुपुत्र माने भी ? तुम्हींको मनखत माननेकी बड़ी पड़ी थी सो अब मान लो, पुत्र बड़ा आज्ञाकारी, सदाचारी हुआ है !

सेठानी—आप तो मुझे ही दोषी ठहराते हैं, मानों मैंने ही उसे बिगाड़ा है।

सेठजी—हाँ सब तुम्हारा ही दोष है। तुमने उसकी तरफदारी कर-करके और चुपकेसे रुपये दे-देकर सर्व नाश कर दिया।

सेठानी—(रोकर) मैं वह दिन नहीं पाती। जब इस दुष्टको इतने छल-कपट करके लाई, लाखों रुपये बरबाद किये, घरका सर्व नाश हुआ और पराई बेटीका जन्म बिगड़ा। मैं क्या जानती थी कि यह ऐसा दुष्ट नीच चांडाल होगा। कई गोद लेते हैं लड़के अच्छे निकलते हैं। मैंने तो जन्मते ही ले लिया फिर भी न जाने क्यों ऐसा हो गया है?

सेठजी—अब सब बातें याद आने लगीं। मैं जब कभी कहीं दान-धर्म अथवा चंदामें देनेका नाम लेता था तो खाने दौड़ती थी। उस समय तो बेटाकी मां बननेका भारी शौक था अब क्यों रोती हो? सांप निकल गया लकीर पीटा करो।

सेठानी—अब तक हुआ सो तो हुआ। आगेको तो सुधार होना चाहिए। आपकी स्वयं उपार्जित सम्पत्ति पर आपका ही अधिकार है। उसे अब अधिक रुपये पैसे नहीं देने चाहिए नहीं तो शराब पीनेमें स्वाहा कर देगा। पराई बेटी हमारे किये पर जन्मभर रोयेगी। उसका प्रबंध अलग

कर दीजिए। इस दुष्टके लिए कुछ थोड़ा मासिक देना चाहिए।

सेठ—मेरी इच्छा तो सब धनको धर्ममें लगानेकी हो रही है। जितना रहेगा उतना पापी पापोंमें लगायेगा।

बिचारे सेठने अपनी पुत्र–वधूके निर्वाहके लिए अच्छी संपत्ति रखकर अपना तथा सेठानीके लिए जन्म तकका अधिकार रखकर समस्त स्टेटको धर्मादा कर दिया। देवीबाबू पिताकी लिखा–पढ़ीका समाचार जान, किंकर्तव्य विमूढ़से रह गये। चिन्ता रहने लगी कि अब बोतल कहांसे आवेगी। अपनी करनीका अच्छा फल प्राप्त कर चुप रह गये।

—व्रजबालादेवी जैन, आरा।
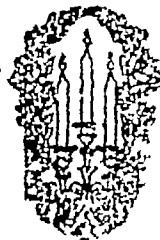
(७)

जड़ाऊ-करनफूल

बेचारे गिरधरलाल हाल हीमें नौकरी पर लग गये हैं। कई महीनों तक इधर उधर भटकनेके पश्चात् यह नौकरी ६०) मासिक वेतनपर मिली है। अहा, क्या ही सज्जन आदमी है ? कितना मिष्ट भाषण है। मिलनसार तो ऐसे हैं कि रविवार छुट्टीके दिन भोजन करना भी कठिन हो जाता है।

आपकी पत्नी प्रियवंदा बड़ी सुन्दर व चञ्चल है। गृहस्थाश्रमका काम चलानेमें वह शून्य है, पैसा कहाँ खर्च करना चाहिए और कहाँ नहीं उसे बिलकुल मालूम नहीं है। अतः जो कुछ उसे पसन्द आता है वह करती है, लेकिन पतिदेव उससे एक बात भी नहीं बोलते। वे सोचते, खुद ही कुछ समय बाद उसे हर बातका ज्ञान हो जायगा। गिरधारीलाल तनख्वाह मिलनेपर सारे रुपये लाकर प्रियवंदाको देते व प्रियवंदा १५-२० रोजमें ही उन रुपयोंकी समाप्ति कर देती।

आज रामलाल सुनारने ५ जोडी जडाऊ करनफूल तैयार किये हैं, वह शहरकी दो चार बडी बहूओंको दिखाने जा रहा है। प्रियवन्दाने भी उन्हें देखा और पसन्द किया।

मनमें सोचा कि जो कुछ भी हो एक जोडी मैं अवश्य खरीदूँगी। उधर रामलाल चार जोडी बेचकर आ गया।

प्रियवंदाको खबर दी कि १ जोड़ा बचे हैं यदि लेने हो तो जल्दी करो, कीमत ५०) है। पांच बजे गिरधरलाल कचहरीसे आये तो घरका अजब हाल देखा। आज चूल्हा ज्योंका त्यों रखा है। खानेपीनेको कुछ नहीं है। प्रियवंदा मुंह फुलाकर बैठी है, आने पर कुछ बोली तक नहीं।

गिरधरलाल—आज तुम्हें क्या हो गया ? मुझसे कोई गल्ती तो नहीं हुई जिससे तुम इतनी नाराज हो ? उठो, भोजन जल्द तैयार करो, मुझे भूख सता रही है।

प्रियवंदा—भूख लगी है तो अपने हाथसे भोजन तैयार कर खा लो, मुझसे नहीं होता।

गिरधरलाल—प्रिय ! मुझे कैसे पता चले कि मुझसे क्या अपराध हुआ है ? मुझे क्षमा कर बताओ कि बात क्या है ?

प्रियवंदा—आज रामलाल सुनारने बहुत बढ़िया जडाऊ करनफूल बनाए हैं व अब एक ही जोड़ा बच गए हैं, मुझे वे पसन्द आ गए हैं अतः आप किसी तरह भी उन्हें ले दीजिए नहीं तो भोजन वगैरह कुछ नहीं करूंगी।

गिरधरलाल सुनते ही सन्नाटेमें आ गए। हाय ! मुश्किलसे तो ६०) महीना मिलता है जो खानेको नहीं पुरता। पहलेके उधार लिए हुए २५) देने हैं अब ५०) का तगादा कहांसे अदा होगा। क्या करना चाहिए कुछ समझमें नहीं आता। कुछ देर सोचनेके बाद उन्हें याद आई कि सरकारी

रुपया जो उनके पास है अभी उसकी कई दिन जरूरत नहीं है। यदि उन रुपयोंसे करनफूल खरीद लिए जायें तो अच्छा हो। तुरत कचहरी वापस जाकर ५०) लिए और करनफूल खरीदकर गृहदेवीके हवाले किए। फिर क्या था? प्रियवंदा जल्दी उठी, चुल्हा जलाकर भोजन तैयार कर पतिदेवकी भूखी आत्माको शांत किया।

अभी प्रातःकाल पूर्णरूपसे नहीं हुआ है तभी एक आदमीने पुकारा—बाबू साहब, बाबू साहब।

गिरधर०—कौन है? क्या है?

चपरासी—साहबने हुक्म दिया है कि आपके पास जो सरकारी रुपये हैं आज ही खजानेमें दाखिल कर जायें।

अब तो गिरधरलाल घबराये, रुपया कहांसे आयगा? आज ही जमा करना है अन्यथा नौकरी भी जायगी और जेलकी हवा भी खानी पड़ेगी। झटपट कपड़े पहनकर रुपयोंका इंतजाम करने निकले, पर कोरा जवाब मिला। अब उन्हें दूसरा कोई सहारा न रहा। वहां साहब भी समझ गये कि इन्होंने रुपया खा लिया है, फौरन पुलिसको इत्तला दी। बातकी बातमें पुलिसने आकर घर घेर लिया। सरकारी रुपया खर्च करनेके गुनाहमें गिरधरलालको गिरफ्तार किया गया। अदालतमें मुकदमा चला, फैसलेकी तारीख रखी गई।

आज अनन्तचतुर्दशीका पवित्र दिन है। आजके दिन इन्द्रने देवों सहित जिनेन्द्र भगवानको सुमेरु पर्वतपर विराजमान

कर क्षीरसागरके पवित्र नीरसे अभिषेक किया है, उसीका आज उत्सव होनेवाला है। हर माता, बहनें, बालक, युवा शृङ्गार कर जिनदेवके पवित्र जिनालयमें एकत्र हो भगवानका अभिषेक देखनेके लिए उत्कंठित हो रहे हैं, बाजोंकी झंकार कानोंको मधुर जान पड़ती है। प्रत्येक नर-नारीके मुखसे जय ध्वनिके शब्द निकल रहे हैं। ऐसी अनुपम शोभाको देख जिनेन्द्र भगवानके दर्शन करनेका किसका जी न चाहेगा ? किन्तु अशुभ कर्मोंके चक्रमें फंसे हुए गिरधरलाल जेलकी चार दिवारीके भीतर तडफ रहे हैं। उन्हें आज ६ मासकी कठिन कैदकी सजा हो गई है। प्रियवन्दा अब घरोंघर कूटना पीसना कर व हमेशा रो-रोकर अपना समय व्यतीत कर रही है। मूर्खनी ! अब रोनेसे क्या होता है ? पतिदेवको तूने ही हठ करके इस दुःखमें पटका जिसका फल अब भोग रही है।

अतः बहनों ! हमारा धर्म है कि हम अपने पतिदेवके सुख दुःखमें हाथ बटावें, गृहस्थाश्रमके कार्यमें निपुण बनें। जितनी चादर देखें उतना पैर पसारें ताकि हम कुशलतापूर्वक धर्मसेवन कर धर्म ऋणसे मुक्त हों।

—कस्तूरीबाई ध० प० खुशालचन्द दिवाकर, चांदा।

(८)

चंपा

कमलश्री—ओ हो, समय बीता जा रहा है किन्तु चंपाका कोई प्रबंध नहीं हुआ। यह ऐसी ही रह जायेगी क्या ? मूर्खा रहनेसे आजकल संसारमें मनुष्यका समाजमें बैठनेका भी मुंह नहीं रह जाता।

चन्द्रशेखर—आप तो प्रत्येक विषयको गंभीर बना देती हैं। मैं क्या चाहता हूँ कि चंपा हमारी पुत्री होकर मूर्खा रह जाय ? क्या मैं संसारकी बातोंसे अनभिज्ञ हूं ? मैं भली-भांति जानता हूं कि इस समय मनुष्योंके गुणोंका धन संपत्तिसे भी अधिक आदर होता है। गुण ही सर्वत्र मान्य होते हैं परन्तु तुम यह नहीं जानती कि चंपाके लिए मैं किसको ठीक करूं।

कमलश्री—मैं तो चाहती थी कि चंपाको उच्च शिक्षा दी जाय, परन्तु किसी विदुषी स्त्रीके न मिलनेसे ऐसा लगता है कि वह अपढ़ ही रह जायगी। अक्षर ज्ञान मात्रसे क्या होता है।

चन्द्रशेखर—मैं कब कहता हूं कि स्त्री नहीं मिलती तो चंपाके पढ़नेका प्रबंध ही न हो सकेगा ? आजकल तो प्रथा चल गई है, सब बड़े घरकी लड़कियाँ पुरुषोंसे पढ़ती है। कहो तो एक ग्रेजुएट चंपाके लिए ठीक कर दूँ। बस सब पढ़ जायेगी।

कमलश्री—जी नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। चंपा सदा छोटी बच्ची ही नहीं रहेगी, वह सयानी होती जाती है।

न जाने पढ़ानेवालेका चरित्र कैसा निकले। मुझे भरोसा नहीं है कोई स्त्री ही बुलाइए।

चन्द्रशेखर—मैंने स्वयं बहुत प्रयत्न कर लिया है। स्त्रीका मिलना ही कठिन है, मिलेगी भी तो वेतन बहुत देना पड़ेगा। हमको रात दिन बराबर थोड़े ही रखना है। पढ़ाकर जानेमें पुरुष हीको क्या डर है?

कमलश्री—जी हाँ, आप कहते ठीक हैं पर मेरी सम्मतिसे चंपाके लिए पुरुष रखना ठीक न होगा। मैं जानती हूं कि मेरी चंपा बड़ी सुशील लड़की है, परन्तु बच्चा ही तो है, आखिर कच्ची बुद्धिका क्या भरोसा, न जाने कब किधर बदल जाये।

चन्द्रशेखर—मैं तुम्हें इस बातका विश्वास दिलाता हूं कि किसी प्रकारकी गड़बड़ नहीं हो सकती। न पढे तो मुझे इसका दोषी मत ठहराना कि प्रबन्ध नहीं किया। स्त्री मेरे पास नहीं है।

कमलश्री—अच्छा, तो किसी विद्यालयमें ही इसे भेज दूँ वहां रात दिन रहकर पढ़ जायगी। पुरुषोंका तो संसर्ग न रहेगा, अधिक न सही थोड़ा ही पढ़ जायेगी।

चंद्रशेखर—यह खूब रही, चंपाके लिए सुयोग्य पति और धनिक घर तुम खोज लेना। जिसके लड़केके लिए प्रश्न करो पहले पूछते हैं कि कितना पढ़ी-लिखी है। तुम्हें नहीं मालूम आजकलके पढ़े लिखे लोग लिखी पढ़ी स्त्रियां खोजते

हैं, जो उनके साथ-साथ सभा सोसाइटीमें जा सकें, साथ-साथ घूम सकें, दस आदमियोंमें बैठकर सभ्यतासे बातचीत कर सके।

कमलश्री—हां, मैं भी सब समझती हूं, इसलिए तो इसे पढ़ानेके लिए आपसे इतना अनुरोध करती हूं। लेकिन आपको यह ध्यान अवश्य दिला देना चाहती हूं कि स्त्रीके पढ़नेकी अपेक्षा उसका निर्दोष और शुद्ध चालचलन होना जरूरी है। यदि पढ़ ही लिया और नेत्रोंका पानी ढल गया तो क्या लाभ हुआ ? विद्याके साथ-साथ मनुष्यका चरित्र अच्छा होनेसे चंदनके वृक्षके समान सुखकारी जीवन बन जाता है।

चन्द्रशेखर—मैं भी इस बातको स्वीकार करता हूं। मैं भी कुमार्गगामी नहीं हूं। जीवनमें सरल चाल-चलन होना मुझे भी पसन्द है। लेकिन तुम स्त्री हो घरमें बैठी रहती हो, मैं रोज अनेक ऐसे ऐसे उदाहरण देखता व सुनता रहता हूं कि सुनकर जी दंग रह जाता है। संसारकी प्रगतिके साथ चलना ही पड़ता है, न चलने पर मनुष्यको बड़ा नीचा देखना पडता है तथा कभी-कभी पश्तताप भी करना पडता है। क्या तुमने नहीं सुना है ? श्यामकिशोरने अपनी स्त्रीसे बोलना भी छोड दिया है।

कमलश्री—यह क्यों ? उससे क्या वह गरीब घरकी लड़की थोडे है। इतना दान दहेज लेकर आई कि सारा घर इन लोगोंका भर गया।

चन्द्रशेखर—दान दहेजकी दुहाई तो सारे शहरमें फिर चुकी है परन्तु इससे क्या होता है ? श्यामकिशोर पढ़े लिखे नई सभ्यताके पुरुष हैं, उनकी स्त्री भोंदू, अनपढ़, गंवार है। भला उससे संबंध रखना उनकी शानके विरुद्ध है। ऐसी-ऐसी घटनाएं देखकर यही ख्याल होता है कि चंपाको न पढ़ाना बहुत बड़ी मूर्खता होगी।

कमलश्री—क्या श्यामकिशोर उसे अब स्वयं नहीं पढा सकता ? चाहे तो तालीम देकर एक योग्य स्त्री बना सकता है। ऐसा स्त्रियोंके प्रति करना पुरुषोंका भारी अन्याय है।

चन्द्रशेखर—अजी, जब जैसी हवा जाती है उसके सामने अन्याय और न्याय करना मनुष्य भूल जाता है। हृदयमें किसी कारणसे घृणा न होनी चाहिए। मैंने भी उसे बहुत समझाया था परन्तु ऐसा पढ़ा-लिखा मनुष्य मैंने कहीं नहीं देखा था। कहता है कि उठना-बैठना तक तो तहजीबसे सीखा नहीं है पढना क्या है ?

कमलश्री—ठीक है, पुरुषोंका अधिकार है, चाहे जैसा अत्याचार करे स्त्रियोंको सहन करना ही पडता है। मानों पुरुष-जाति स्त्री-जातिके दमनके लिए ही उत्पन्न हुई है। यदि श्यामकिशोर खुद पढा-लिखा सभ्य बनता है तो पहले क्या आंखें फूट गई थीं ? पहले ही देखभाल कर करता तो इस जीवका वध तो न होता। बेचारी कहीं दूसरी जगह जाती जहां उसका मान, आदर होता।

चंद्रशेखर—इस बातका नाम न लो। देखनेका नाम लेते ही श्यामकिशोर उछलने लगते हैं, और आपेसे बाहर होने लगते हैं। कहता है कि मैं क्या जानूं, मैं तो पढ़ता था। छोटी उमर थी, घरवालोंने धनके लोभमें मुझे डुबो दिया। मैं स्वयं करता तो पढ़ी-लिखी और खूब होशियार लडकीसे करता। ऐसे-ऐसे उदाहरणोंको देखकर ही ऐसी प्रथा चल गई है कि लडका-लड़की एक दूसरेको परस्पर देख लेते हैं जिससे उमर-भरकी कलह खत्म हो जाती है। अतः तभी मैं सोचता हूं कि चंपाके पढ़ानेमें जरा भी आना-कानी नहीं करनी चाहिए, नहीं तो हम लोगोंको पश्चात्ताप करना पड़ेगा।

कमलश्री—मैं कब कहती हूं कि विलम्ब करना उचित है, मुझे तो क्षण-क्षण भारी है। आप बातें तो इतनी बनाते हैं, परंतु पूरा करना नहीं सीखते। केवल कहने भरसे ही पढ़ाईका प्रबंध थोड़े ही हो जायगा। वह तो स्वयं करना पड़ेगा। एक ख्याल जरूर रखें जहां तक हो सके स्त्रीकी ही तलाश कीजिएगा।

चन्द्रशेखर—मेरी बातका तुमको विश्वास नहीं है। मैंने बहुत ढूंढा मगर स्त्रीका मिलना कठिन है। तुम्हारी अनुमति हो तो मैं कल ही एक मास्टर चंपाके लिए ठीक कर दूँ। जितनी देर कहोगी पढ़ा जाया करेगा। कोई हरजकी बात नहीं है।

कमलश्री—आपकी जो इच्छा हो करिए। मैं माता हूं तो आप भी चंपाके पिता हैं, दोनोंका समान अधिकार है। दोनों

ही चंपाके शुभचिन्तक हैं। जैसा ठीक समझें शीघ्र ही उचित प्रबंध कर दीजिए।

चन्द्रशेखर—रामचन्द्रबाबू अभी हालमें नौकरीकी तलाशमें घूम रहे हैं। बी० ए० पास हैं, कहो तो चंपाके लिए रख दूं। २०) रुपये मासिकमें दो घंटे अच्छी तरह पढ़ा जाया करेंगे। सुना है अच्छे आदमी हैं, कोई डरकी बात नहीं है।

कमलश्री—मैं तो पुरुष रखनेके पक्षमें नहीं हूं, परन्तु अगर आपकी इच्छा है तो रखिए। देख लीजिएगा आदमी तो नेक चालका होना चाहिए।

चंपा बराबर दो घण्टे रोज पढ़ने लगी। धीरे धीरे उसने इंग्लिश पढ़ना भी प्रारम्भ कर दिया। सबकी सम्मति हुई कि ऐसे ढंगसे पढाया जाय जिससे एन्ट्रेस पास कर ले। बिना अंग्रेजी पढ़े हुए लोगोंको किसी गिनतीमें गिना ही नहीं जाता।

पन्द्रह वर्षकी अवस्था तक चंपा रामचन्द्रबाबूसे पढ़ती रही। उसने मिडिल पास कर लिया। अब मेट्रिककी परीक्षाके ध्येयसे पढाई जोरोंसे चलने लगी।

चन्द्रशेखर—अब एक आदमीसे काम नहीं चलता। चंपाके लिये दूसरे आदमीका प्रबंध करना चाहिए नहीं तो मैट्रिकमें पिछड जायगी।

कमलश्री—हाँ मैं भी यही कहना चाहती थी कि पढाईका अच्छा प्रबंध होना चाहिए। किसीको ठीक किया है क्या ?

चन्द्रशेखर—कल एक महाशय आये थे, नवीनबाबू उनको अपना मित्र बताते हैं। कहते थे कि आदमी योग्य हैं, एक स्कूलके हेड्मास्टर भी रह चुके हैं, विद्या अच्छी है, उत्तम रीतिसे चंपाको पढायेंगे।

कमलश्री—उनका चाल-चलन अच्छा है न ?

चन्द्र०—सुना तो है कि अच्छे आदमी हैं, काम कराने से पता लग जायगा। अभी हालमें बाहरसे आये हैं।

नवीनबाबू—ये बाबू चन्द्रकिशोर आये हैं। मिलकर तय कर लीजिए कि कबसे पढाने आया करेंगे ?

चन्द्रशेखर—चंद्रकिशोरजी ! मैं अपनी कन्याको मैट्रिककी परीक्षा दिलाना चाहता हूं। क्या आप उसे पढा सकेंगे ?

चन्द्रकिशोर—मुझे आपकी आज्ञा शिरोधार है। कहिये सेवामें उपस्थित हो जाऊं।

चन्द्रशेखर—कलसे ही आप आइये। समय प्रातःसे रात्रि होनेके पहले तकमें जो आपको ठीक जँचे वही ठीक है।

चंपा जैसी रूपवती थी वैसी ही गुणवती भी थी, वह सरल हृदया बालिका बड़ी चतुर गंभीर और धार्मिक विचारोंसे परिपूरित थी, उसने धर्मग्रंथ पढ़े थे। अपनी मातासे घरके काम काजकी भी समय समयपर शिक्षा लेती थी, गुरुजनोंकी आज्ञा पालनमें तनिक भी आगा पीछा नहीं करती थी। चंपाकी आयु १४ वर्षकी थी। हिन्दी, संस्कृत, धर्मादिका ज्ञान अच्छी तरहसे होने लग गया था।

चंद्रकिशोर रोज पढाने आया करते थे। पढाते पढाते चंपाके रूप लावण्यताको देखकर मन ही मनमें विचार कर रह जाते थे कि कैसी अनुपम मूर्तिवत् चंपा लगती है।

एक दिन चन्द्रकिशोरके रूमालके कोने पर May love Lotus लिखा था। चंपाने साधारण हृदयसे इस वाक्यको अपनी कापी पर उतार लिया कि वह भी किसी रूमाल पर ऐसा ही बनाकर सीख लेगी। वह क्या जानती थी कि इसका परिणाम कुछ उल्टा निकलेगा। चंद्रकिशोरने यह वाक्य चंपाकी कापीमें देखते ही समझा कि हो न हो किसी बुरे अभिप्रायसे यह लिखा है। चंपाका मन टटोलनेके लिए जब जब इसकी कापियां जांच करनेको लेते थे कुछ न कुछ पेंसिलसे लिख देते थे। दो एकबार चंपाने कापीके सिरेपर लिखा देखा Do not fear, write a letter अर्थात् डरो मत, पत्र लिखो। उसने सोचा मेरे किसी भाई बहनका यह कार्य है यों ही लिख दिया होगा। फिर देखती है कि पहला लिखा मिटा दिया है और नया वाक्य लिखा है Be bold, do not fear हिम्मतवाली बनो, डरो मत! चंपा एक अत्यन्त सरल बालिका होनेके कारण इन गूढ़ रहस्योंका भेद व अर्थ कुछ न समझ सकी। अपने पढ़नेमें मस्त रहती थी। उसके साथ उसकी एक सहेली नलिनी भी पढनेके लिए रोज आया करती थी। एक दिन समय देखनेके बहानेसे चन्द्रकिशोरने नलिनीको घड़ी देखकर आनेको भेजा, और उसके जानेके पश्चात् एक कागज चंपाको दिया।

जिसमें लिखा था—How long I may wait for you. अर्थात् कितने दिन मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहूं। जब चंपा उसे पढ चुकी तो अपनी जेबमें छुपा लिया।

इस वाक्यको पढते ही चंपाके शरीर पर मानों सांपने काट खाया है। वह क्रोधसे भभक उठी तथा कुछ कहना ही चाहती थी कि नलिनी आ गई तथा एक क्षण उसने सोचा कि शीघ्रता करना ठीक नहीं, न जाने क्या परिणाम निकले। पहले इसका विचार पूर्णरूपसे कर लूं तब इनसे इसका बदला लूँगी।

सिर दरदका बहाना करके चपा पढना बंद कर घरके भीतर आ गई, तथा सोचने लगी कि क्या करूं, कैसे मेरा इस नर पिशाचसे पीछा छूटे तथा किसीको इसके कृत्योंका पता न लगे नहीं तो मेरी तथा माता-पिता सबकी बदनामी होगी। वह सोच-सोचकर बैचेन होने लगी तथा अन्तमें उसने यही निश्चय किया कि मांसे कहना अच्छा होगा बनिस्वत कि मैं इसको छुपाय रखूँ। वे कुछ न कुछ अच्छी ही सम्मति देगीं। न बतानेसे पढ़नेके लोभसे कहीं अधिक मामला न बढ़ जाय कुछ भी हो फेल होना न पढ़ना अच्छा। मैं इस व्यक्तिसे नहीं पढ़ूँगी। ऐसा सोचकर चंपाने एकांतमें अपनी मांको देखकर कहा—माँ! मुझे आपसे कुछ कहना है, आप मेरे वाक्यों पर विश्वास करें और उसका कुछ उपाय बतलावें तो कहूं नहीं तो न कहूंगी।

कमलश्री—चंपा ! तू कहती न सुनती और भूमिका इतनी बांधती है। मेरी समझमें नहीं आता कि तू आज पागल या दिवानी हो गई है जो मुझे काम भी नहीं करने देती। न कुछ कहती ही है।

चंपा—कहना न होता तो मैं प्रश्न ही क्यों उठाती ? कहिए नाराज तो न होगी तथा मेरी बातोंका विश्वास कर लेगी न ?

कमलश्री—हां मैं तेरी बातोंका विश्वास क्यों न करूंगी ? क्या मैं तेरा स्वभाव नहीं जानती हूं ? कह क्या कहना है, मुझे देर हो रही है।

चंपा—मां, यह जो नये मास्टर चन्द्रकिशोर बाबूजीने रखे हैं अच्छे आदमी नहीं है।

कमलश्री—(सिरपर हाथ रखकर) क्या कहा, क्या उन्होंने तुझसे कुछ कहा है ? कैसे जाना कि वे अच्छे नहीं है।

चंपा—मां, महिनोंसे वे मेरी कापीके ऊपर कुछ न कुछ मुझे लिखा हुआ मिलता था। पहले जाना कि मुन्नूकी बदमाशी होगी। फिर देखा कि कभी वे ही शब्द रबड़से मिटे हैं और दूसरे वाक्य लिखें हैं। मैंने ध्यानसे देखा तो मास्टर साहबके अक्षरोंकी तरह लिखावट जान पड़ी। तब भी मुझे संदेह रहा कि भला मास्टरसाहब ऐसा क्यों करेंगे। मैं चुपचाप अपना काम करती थी। अतः उनपर संदेह न होनेके कारण

मैंने आपसे भी नहीं कहा। कल देखा कि उन्होंने एक कागजके टुकड़े पर How long I may wait for you लिखकर मुझे दिखाया और फिर जेबमें ही छुपा लिया। यह देखकर मुझे बड़ा क्रोध आया तथा कुछ कहना चाहती थी कि नलिनी घड़ी देखकर वापस आ गई जिसको कि उन्होंने भेजा था। मैं सर दर्दका बहाना करके उठ आई। तथा सोचा कि आपसे सब बातें कहकर जो उपाय अच्छा बताएगी वही करूंगी।

कमलश्री सब बातें आद्योपांत शांतिसे सुननेके पश्चात् कहने लगी—क्या बात है समझ नहीं पड़ती। मेरा सिर तो चक्कर खाने लगा है। ऐसी बात करनेका मौका उनको कब मिला, कबसे उन्होंने तेरी कापीपर लिखना प्रारम्भ किया था?

चंपा—मां, आप मेरी मां है। मैं जो मेरी गल्ती है उसे भी छिपाना नहीं चाहती, परन्तु यह अवश्य कहूंगी कि मेरे चित्तमें किसी प्रकारका पाप व दूसरे भाव न थे। एक दिन मास्टर साहबके पास रुमाल था। उसके एक कोने पर सुन्दर कढाईसे लिखा था—May love lotus मैंने वैसा ही अपने रूमाल पर बनानेके ख्यालसे कापी पर लिखा था। यदि मैं जानती कि मास्टर साहब इसका उल्टा अर्थ समझ लेंगे तो मां मैं सच कहती हूं लिखना दूर रहा उसे देखती तक नहीं। उसीके पश्चात् मैंने अपनी कापियों पर तरह तरहके वाक्य लिखे पाये। मैं नहीं जानती थी कि ये उन्हींकी करतूतें हैं

अतः मैं ध्यानपूर्वक पढती गई। जब कल उन्होंने मुझे परचेपर लिखकर दिखाया तो मैं दंग रह गई, मैं चली आई। अब बताईये क्या करूं ?

कमलश्री—अच्छा तो उन कापियोंको ला जिस पर उन्होंने लिखा है। चंपा सब कापियां ले आई। कमलश्रीने सब कापियां देखीं, मास्टरके लिखे अक्षरोंको उनके सही किये हुए अक्षरोंसे मिलाया, देखा दोनों एकसे है। वह समझ गई कि मास्टरकी पूरी पूरी शैतानी है, सोचकर कहा—

कमलश्री—चंपा, बाबूजी व मेरे कहनेसे बात बिगड जायगी चारों तरफ हल्ला-गुल्ला हो जायगा, तथा वो भी अपनी गल्तीको न मानेंगे। हमें उल्टा मूर्ख बनना पड़ेगा, इससे अच्छा है कि तू ही उन्हें फटकार दे तो उनको अपनी मूर्खताका पता लग जायगा। और वे बात भी न बदल सकेंगे।

चंपा—अच्छा, अब आपने आज्ञा दे दी, मैं उन्हें अच्छा सबक सिखा दूँगी, मुझे केवल आपका ही डर था। चंपा बड़ी चतुर लड़की थी, छोटी उमर होते हुए भी उसका मन चंचल न था। चित्त गम्भीर तथा विचारशील था। वह भी अवकाश देखने लगी, रोजकी भांति पढ़ने लगी।

इधर चन्द्रकिशोर समझने लगे कि चंपाके मौनमें कुछ सफलता प्राप्त होगी। वे बड़े प्रसन्नचित्त होकर एक दिन पढ़ाकर जाते समय एक कागजमें लिखे वाक्योंको चंपाको दिखाने

लगे । लिखा था—I Love you, do not fear, be bold इत्यादि । अब क्या था, चंपा देखते ही शेरनीकी भांति गरजने लगी । परचा मास्टर जेबमें रखने ही वाले थे कि चंपाने हाथसे झपट लिया तथा कहने लगी—

आपके इस परचेको दिखानेका आशय क्या है ? बताइये कि आप मेरा सर्वनाश करने आते हैं या मुझे शिक्षा देने ? आपको लज्जा नहीं आती, जिस विद्यार्थीको पढ़ानेके लिए आप गुरु बनाए गये है उसीका सर्वस्व मिट्टीमें मिलाना चाहते हैं । आप मनुष्य होने पर भी नराधम हैं । मैं आजसे पढ़ना तो दूर रहा, आपका मुंह भी नहीं देखना चाहती । यदि बाबूजीसे अथवा मांसे कह दूँ तो आपकी चांद जूतोंकी मारसे गंजी हो जायगी । आपने मुझे समझा क्या है ?

चन्द्रकिशोर चंपाकी धधकती क्रोधाग्नि देखकर दंग रह गए । हक्का-बक्का होकर चंपाका मुंह देखने लगे । उनसे कहते कुछ न बना । समस्त शरीर पसीनेसे तर हो गया, तथा लज्जित हो नीचा मुंह करके कहने लगे—चंपा ! मैं नहीं जानता था कि तुम ऐसी लड़की हो, मुझे क्षमा करो । बस, मैं जन्मभरके लिए तुम्हारे सिखाये पाठको विद्यार्थीकी तरह घोसता रहूंगा आजसे तुम मेरी गुरु हो मै तुम्हारे विद्यार्थी । मुझे अधिक लज्जित न करो, क्षमा करो ।

चंपा—आप तो क्षमा मांगकर बरी हो गये, मेरा तो आपने जीवन ही नष्ट करना चाहा था। क्या आप हिन्दु महिलाओंके सतीत्वको भूल गये ? क्या आपने पाश्चात्य ढ़ंगका टीका हम लोगों पर भी लगाना चाहा ? क्या आप भारतके स्त्रीत्वके गौरवको एकदम भूल गये हैं ? क्या आपने अंग्रेजी शिक्षासे यही समझा था और सीखा था कि एक अबोध बालिकाका खून करें ? आप लोग मास्टर तो क्या नौकरके जैसी योग्यता नहीं रखते हैं ? आप सभ्य देखनेके ही लगते हैं भीतर आपके विष भरा पड़ा है। ऐसी डिग्री प्राप्त करनेसे तो अनपढ मनुष्य ही अच्छे होते हैं। बस, यहांसे चले जाइये, इधर कभी न मुंह दिखाइयेगा।

चन्द्रकिशोरने चंपाके दोनों पैर पकड लिए, हिलकियोंसे रोने लगे और कहा—चंपा, आजसे तुम मेरी पुत्रीके समान हो। आज मेरी यही हालत है जैसे कि कसाईके हाथमें बकरेकी। मैं तुम्हारे उपकारको आजन्म नहीं भूल सकता हूं। तुमने मेरा उद्धार कर दिया, मैं अब जन्मभर कभी बुरे मार्गका अवलंबन नहीं करूंगा। तुमने मेरी आंखें खोल दीं। मैं बड़ा पापी मूर्ख हूं। मुझे अब क्षमा करो, यदि तुम अपने बाबूजीसे कहोगी तो सच कहता हूं कि अपना आत्मघात कर डालूंगा। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि आजसे तुम मेरी पुत्रीके समान हो। मैं अब तुम्हारे संसर्गसे अच्छा बननेका प्रयत्न

करूंगा । तुम्हारा पढ़ना शेष होने पर भी तुम्हारे इस ऋण तथा भिक्षादानके लिए चिर कृतज्ञ रहूंगा ।

चंपा—जाइये, आप लोगोंके वाक्यों पर जो विश्वास करे उसे निरा पागल समझना चाहिए । मैंने तो प्रतिज्ञा कर ली है कि आपसे अब न पढ़ूंगी, परन्तु आपके कहनेसे इतना कर सकती हूं कि आपके इस महत्वपूर्ण संवादका संदेशा संसारको न सुनाऊंगी । क्योंकि इसमें मेरे माता-पिताका और खुद मेरा अपमान है । लेकिन आप इस बातका सदैव ख्याल रखिए कि मेरे समान अपनी और बहनोंको गड्ढेमें न ढकेलिएगा । यदि मैं आपके प्रलोभनमें फंस जाती, तो मेरी आत्माकी क्या दुर्गति होती ? आजसे प्रतिज्ञा करिये कि किसी स्त्री जातिका अपमान न करेंगे, उनको पूज्य दृष्टिसे देखेंगे तथा अच्छे मार्गपर लगानेका प्रयत्न करेंगे ।

चन्द्रशेखर—चंपा ! मुझे और लज्जित न करो, मैं अपनी प्रतिज्ञाको कार्यरूपमें परिणत करके दिखा दूँगा । तभी तुम्हें अपना मुंह दिखाऊंगा ।

चंपाने चन्द्रकिशोरसे पढ़ना छोड़ दिया । कठिन परिश्रमसे प्रथम श्रेणीमे एंट्रेन्स पास किया ।

यद्यपि चंपाके समान सब बहनोंका हृदय तथा साहस होना कठिन ही नहीं वरन् दुर्लभ है, तो भी हमारी प्रत्येक बहनोंको चंपाके समान बुद्धिमति तथा सरल परिश्रमी बननेका

उद्योग करना चाहिए। स्त्रियां जब तक अपने पैरों पर खड़ी होना न सीखेगीं तब तक उनके सतीत्वकी रक्षा होनी असाध्य है। मनुष्य खुद ही अच्छा बुरा बनता है, बाहरके तो एक साधन मात्र निमित्त हैं।

माता पिताओंको भी बालिकाओंकी शिक्षाके विषयमें पूर्ण ध्यान देना चाहिए। उन्हें शीघ्रतासे पुरुषोंके हाथमें न सौंप देना चाहिए। ऐसे लाखों उदाहरण आजकल मिलते हैं कि अबोध बालिकाएं दुष्टोंके पंजोंमें फंस जाती हैं तथा जन्मभर संतापकी आहें भरती रहती हैं।

—व्रजबालादेवी जैन, आरा।

(९)

सुषमाकी अवनति-उन्नति

रात्रिका पिछला पहर है। एक-एक कर आगन्तुक गण अंगडाई लेते हुए अपने अपने घर जाने लगे। २ बजे गाने बजानेका आनंद समाप्त हो गया। ताराबाईने भी अपना ईनाम इकरार लेकर अपने साजिन्दोंके साथ घरको प्रस्थान किया। घरके पास पहुंच कर ताराबाई एकाएक चौंक पड़ी। उसने अपने हाथसे अच्छी तरह रौशनी डालकर देखा कि उसकी पडोशन सुषमा द्वार पर पडी है। कुछ देर तक वह सोचती रही। फिर सुषमाके पास आकर धीरेसे उसे उठा लिया। सुषमा स्वप्नमें पतिके अपार क्रोधका दृश्य देख रही थी। ताराबाईके कर स्पर्शसे उसने समझा कि पतिके चरणोंका आघात ही है। अत आंखें खोलकर भयभीत दृष्टिसे देखने लगी। पतिके बदले ताराबाईको देखकर सुषमाको रात्रिकी सारी घटनाएं याद हो आईं। इसके हृदयमें नाना प्रकारके भाव उत्पन्न होने लगे, मुंह पर अनेक प्रकारके चढ़ाव-उतार होने लगे। क्रोध, अभिमान ग्लानिके तूफानमें पड़कर उसकी हृदय नौका भयानक रूपसे डगमगाने लगी और अबला सुषमा प्रलोभनके अथाह समुद्रमें डूबनेको तैयार हो गई।

ताराबाई सुषमाकी इस दशाको आश्चर्यजनक दृष्टिसे देख रही थी। वेश्यापनमें ही उसकी इतनी अवस्था हुई थी।

मनुष्यके हृदयगत भावोंको परखनेका उसे खूब अभ्यास था। उसने समझ लिया कि सुषमाका मर्मस्थान कहां है। आजसे पहले भी वह बराबर सुषमाको देखा करती थी और देखती थी उसकी अनुपम रूपराशिको। एक तरफ अपना ढलता हुआ यौवन, दूसरी तरफ सुषमाकी नवविकसित रूप माधुरी। ताराबाईका मन ललचकर रह जाता था।

आज ऐसा स्वर्ण-संयोग मिलने पर उसे ज्ञात हुआ मानों साक्षात् लक्ष्मी ही मेरे सामने पडी है। अतः उसने बड़े प्रेमसे कहा—बेटी उठो, यहां क्यों पड़ी हो, चलो यह घर भी तो तुम्हारा ही है। जब इच्छा हो चली आना। इस प्रेममय संबोधनने सुषमाको मुग्ध कर लिया।

मनुष्य हृदयको जब चोट पहुँचती है तो स्वभावत वह सहानुभूति ढूंढ़ता है। और सहानुभूतिका एक एक शब्द उसे अमृतकी भांति जान पड़ते हैं। अतः सुषमा यदि किंकर्त्तव्य-बिमूढ़की भांति ताराबाईके साथ होती तो क्या आश्चर्य था? जिस घरको सुषमा नित्य दूरसे देखा करती थी आज उसीमें आकर उसके आश्चर्यकी सीमा न रही। इतना ठाट-बाट तो रानियोंको भी नहीं नसीब होता। ताराबाईका इतना सौभाग्य! ताराबाईने उसे गद्देपर बैठाकर सब हाल पूछा और हर तरहसे सान्त्वना दी।

दूसरे ही दिनसे मनमोहक लच्छेदार बातोंके द्वारा

ताराबाईकी शिक्षा प्रारम्भ हो गई। उसने सुषमाकी जर्जर धर्म शृङ्खलाको सुगमतासे तोड़ दिया। उसकी सोई हुई क्रोधाग्निको प्रलोभनोंकी वायुसे प्रज्वलित कर दिया। सुषमाने निश्चय किया कि वह किसी प्रकार मनुष्य समाजको जिसने उसे पददलित किया है नीचा दिखायेगी, अपने चरणोंमें लौटनेके लिए उन्हें बाध्य करेगी, तभी उसका जीवन सार्थक होगा, उसकी आत्माको तृप्ति होगी। चतुर ताराबाई उसी दिन तीर्थयात्राके बहाने सुषमाको लेकर काशीको चल दी।

प्रातःकालका समय है, किशोरीलालने उठकर किवाड़ खोले। सुषमाको न देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ और पश्चात्ताप भी। परन्तु क्रोधाग्निके कारण उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई। उन्होंने सोचा कहां जायगी देवीप्रसादके यहाँ लौट गई होगी। दो चार दिनमें खुद ही आ जायगी, मैं अब बुलाने नहीं जाऊंगा। यही निश्चय कर अपने दैनिक कार्यों में लग गये।

दो तीन दिन बीत जानेपर जब सुषमा न लौटी तो किशोरीलाल देवीप्रसादके यहां खबर लेनेके लिए गये। पर वहां मालूम हुआ कि सुषमा उसी रातको चली गई तबसे नहीं आई है, सुनकर किशोरीलालके ऊपर वज्रपात हो गया। अपनी करनी किसीसे कहते न बनी। इतने क्रोधकी कल्पना उन्होंने स्वप्नमें भी नहीं की थी। अपना क्रोध उनका काफूर हो गया। अपने ऊपर ही बारम्बार गुस्सा आने लगा। कई जगह खोज

पूछ करने पर जब कुछ पता नहीं चला तो उन्होंने निश्चय कर लिया कि जरूर सुषमा जमुना अथवा गंगामें डूब मरी है।

उनका चित्त किसी काममें नहीं लगता, अपना क्रोध उन्हें सहस्रखंडक होकर छेदने लगा, न समयपर खाना न नहाना, नौकरीपर भी यथासमय नहीं पहुंचते, अतः वहांसे भी छुट्टी मिल गई। एक दिन वे अपना सर्व सामान बेचकर शहर छोड़ आये। उसके बाद किसीने किशोरीलालको नहीं देखा। धीरे-धीरे कई दिन बीत गए। समयके प्रवाहमें किशोरीलाल तथा सुषमा सभी विलीन हो गए।

ताराबाई सुषमाको लेकर गंगाके किनारे एक मकानमें रहने लगी। सुषमाके मनोरंजनका हर सामान प्रस्तुत कर दिया। उसे कभी किसी तरहकी चिंता न करने देती थी। कभी थियेटर, कभी सिनेमा, कभी मेला-तमाशा नित्य नए नए चोंचले होने लगे। किंतु ज्यों ज्यों सुषमा ताराबाईके निकट होने लगी उसे नारकीय लीलासे घृणा होने लगी। उसने इस प्रकार शरीर बेचना महानिंद्य समझा और गाना-नाचना ही अपना लक्ष्य माना। पुष्परसके लोभी भ्रमरोंको फूलोंकी भांति अपनी निधि लुटाना उसे अभीष्ट न था, बल्कि उसे सुरक्षित रखते हुए औरोंका मान गलित करना ही उसका कर्त्तव्य हुआ। इसी निश्चयके अनुसार बड़े बड़े गवैयों द्वारा संगीत-शिक्षाका अभ्यास करने लगी। प्रखरबुद्धि सुषमाको इस विषयमें निपुण होते देर न लगी। दूर-दूर तक उसके गानेकी प्रशंसा होने लगी।

कभी कभी बड़े-बड़े रईसोंके यहां महफिलमें जाती, कभी ठाकुर द्वारे ठाकुरजीकी भक्तिके लिए बुलाहट होती। वहां उसी सुषमाका आदर-सत्कार ठाकुरजीसे भी ज्यादा बढ़कर होने लगता। भगवानको भूलकर लोग सुषमाके ही ध्यानमें तल्लीन हो जाते थे।

बड़े बड़े महन्तों एवं पुजारियोंकी लोलुप दृष्टिको देखकर सुषमा जल जाती थी। घर आने पर मौका पाते ही उनका तिरस्कार करनेसे न चूकती थी। किन्तु वेश्याका तिरस्कार भी कड़वी औषधिकी भांति आदरणीय समझा जाता है। जो सुषमा जरा सा मान सम्मान पानेके लिये लालायित रहती थी, उसीके आगे मानकी दरिया बह रही है। वह उसे पैरोंसे ठुकराती है तब भी वह उसके चरण धोती है।

देखते देखते सुषमाकी वृहत् अट्टालिका रमणीय उद्यानके साथ दर्शनीय बन गई। लाखों रुपये बेंकमे जमा हो गए। सुषमाने धन संपत्ति पाई, किन्तु उसने जिस सुख-शांतिकी कल्पना की थी वह उसे प्राप्त न हो सकी। उसे ज्ञात होता था मानों वह मृगमारीचिकाकी भांति अथाह मरुभूमि पर दौड़ी जाती है, जहां न सन्तोषकी शीतल छाया ही है और न शांति सलिलकी एक धारा। एक तरफ सुभद्राकी गृहस्थी दूसरी तरफ अपने जीवनकी सार विहीनता जहां सभी सुखके साथी हैं, दुःखमें कोई पलक उठाकर देखने भी नहीं जाता। हठात् उसके सामने किशोरीलालकी मूर्ति आ खड़ी होती। वह उपे-

क्षित भावोंसे अन्य कार्योंमें लगकर उन बातोंको भूल जानेकी चेष्टा करती। इसी प्रकार दिन, मास और वर्षपर वर्ष बीतने लगे।

माघका महीना है। इस वर्ष कुम्भ लगनेके कारण काशीकी शोभा चौगुनी लग रही है। नित्य ही हजारों आदमी आते हैं जाते हैं, कहीं तिल रखनेकी भी जगह दिखाई नहीं देती। सुषमाके मकानके पीछे गलीके सामने रामनाथ पंडाका मकान था, वह बाहरसे आये हुए यात्रियोंको ठहराया करता था। सुषमा कभी अवकाशके समय वहां बैठती तो देखा करती थी। एक दिन उसे किसीके धीरे धीरे सिसकनेकी आवाज सुनाई दी। उसके मनमें कुछ सन्देह हुआ। उसने सामने खडे हुए नौकरको पुकारा। पहले तो वह बहुत घबराया किन्तु रुपयेके लोभमें रामनाथकी करतूत बताने लगा।

उसने कहा—सरकार! इसके आदमी स्टेशनों पर, मंदिरोंमें, घाटोंपर सब जगह घूमा करते हैं। जहां कोई अकेली स्त्री दिखाई दी वहीं उसे ठहरानेके बहाने, किसीको घर पहुंचा देनेके बहाने फुसलाकर यहां ले आते हैं और उसका सर्वस्व अपहरण कर दूसरे देशोंमें ले जाकर बेच आते हैं। आठ दस औरतें इस समय इस मकानके नीचले हिस्सेमें बन्द हैं। क्रोधके मारे सुषमाका बुरा हाल हो गया। स्त्री-जातिकी इस दुर्व्यवस्था पर वह तिलमिला उठी!

उसने सोचा कि हमारी इस दशाका कारण हमारी ही कमजोरी है। इसीका लाभ चोर, उचक्के, बदमाश उठाया करते हैं। जब तक स्त्रियां अपने पैरों पर खड़ी न होगीं, कभी अपना उत्थान व रक्षा न कर सकेगीं।

कोई समाजकी सतायी हुई, कोई किसीके द्वारा बहकाई हुई, कोई भूली भटकी हुई हजारों बहनें इन शिकारियोंका शिकार हो जाती हैं। किसीके कानों पर जूं तक नहीं रेंगती।

मैं आजसे इनकी रक्षाको अपना धर्म बनाऊंगी, इनके उत्थानमें अपना सर्वस्व लुटा दूँगी और संसारको दिखा दूँगी कि स्त्रियां भी स्वयं अपनी रक्षा कर सकती हैं।

कोतवाल साहबके आने पर सुषमाने उनसे सब हाल कहा। पुलिसकी सहायतासे रामनाथके घरसे १० स्त्रियोंका उद्धार हुआ। सुषमाने उन्हींको लेकर अपने कार्यका श्रीगणेश कर दिया। उसने अपने मकानके बहुमूल्य आडम्बरोंको बेच दिया। वेश्यामंदिरके बदले सुषमाका भवन "महिला उद्योग मंदिर" बन गया।

सबसे प्रथम शारीरिक व्यायाम द्वारा शरीरकी रक्षा करना, लाठी, गदा, तलवार इत्यादि चलाकर आवश्यकता पड़ने पर आत्म-रक्षा करना, अपने उद्योग द्वारा अपना जीवन निर्वाह करना उनका उद्देश्य हुआ।

उद्योग मंदिरके शिल्पविभागमें नाना प्रकारके खिलौने, चटाईयाँ, कुर्सी, मेज बेंतकी बनी हुई चीजें तैयार होने लगी।

उन चीजोंको देखने बड़े प्रेमसे अपनाया। उससे दिनोंदिन आमदनी बढ़ने लगी और हजारोंकी संख्यामें दीन-दुःखी, अनाथ, असहाय बहनें आकर कला-कौशल सीखकर जीवन निर्वाह करने लगी। पतित स्त्री भी अन्तमें चेत जाय तो भारतवर्ष भी जापान आदि देशोंकी भांति गृह उद्योगके द्वारा समृद्धशाली बन जाये पापोंका क्षय होनेसे वह आत्मा परभवमें कष्ट न पावे। परन्तु भारतमें महिलाओंका गड्ढेमें गिरना सुलभ है, लेकिन निकलना कोई विरली ही जानती है।

—श्रीमती सुशीला बीबी, प्रयाग।

(१०)
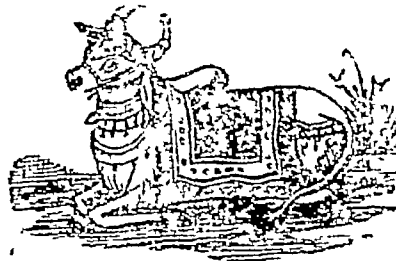
सच्ची घटनाके आधारपर (कल्पित गल्प)

पहचान न सकी

उस दिन सायंकालके ७ बजे जब कि विनोद आनन्द-नगरके आनंदबागमें झरनेके दृश्योंका अवलोकन कर रहा था. झरनेका पानी न जाने अपनी किस भाषामें अपने स्वर्गीय गानका उपक्रम कर रहा था। बस उसी समय प्रभा आई। उसकी वेशभूषा साधारण थी। शरीरमें एक खद्दरकी छपी हुई साड़ी। पैरोंमें जूते और हाथोंमें २-२ चूड़ियोंके अलावा कोई आभूषण न था। मगर उसका स्वाभाविक रूप, भोली सूरत, शर्मिली आंखें, स्त्री सुलभ मोहकताके लिए पर्याप्त थी।

विनोदके सामनेकी बैंचपर बैठकर कुछ देर तक स्तब्ध रहनेके पश्चात् बोली—महाशय आपका शुभ नाम? आप कहांके रहनेवाले हैं? विनोद स्वभाविक स्वरसे बोला-देवीजी, मेरा छोटासा नाम विनोद है। मैं यहांके सुप्रसिद्ध पंडित शांतेशजीका पुत्र हूं, स्थानीय संस्कृत विद्यालयमें अध्यापक हूं। और आप?

प्रभा (आश्चर्यसे) अच्छा! तब तो मेरे पिताजी और आपके पिताजीमें बड़ी घनिष्टता है। मैं स्थानीय मु० रघु-देवप्रसादजी आनरेरी मजिस्ट्रेटकी पुत्री प्रभा हूं। स्थानीय

रामगंजके सुशीला कन्या विद्यालयकी प्रधानाध्यापिका हूं। अहोभाग्य, जो आज आपके शुभ दर्शन हुए। कभी कभी अपने दर्शनसे मुझे कृतार्थ करते रहा कीजिये। विनोदने सम्मति सूचक सिर हिलाकर कहा—मैं इस योग्य तो नहीं हूं किन्तु आपकी आज्ञाका यथा संभव पालन करनेकी चेष्टा करता रहूंगा और यदि मुझसे कुछ भी आपका हित हो सका तो मैं अपनेको कृतकृत्य समझूंगा। फिर कई बिषयों पर संवाद होते रहे। पश्चात् अपने अपने निवास स्थानको चले गए।

उस दिनके वार्तालापसे दोनों समझ गए कि दोनों ही अच्छे विद्वान हैं। दोनोंके ही हृदयमें एक दूसरेकी आवश्यकता प्रतीत करने लगे। दोनोंका हृदय मिलता ही गया, कई विवाद-ग्रस्त विषय पारस्परिक सहयोगसे सुलझ गए। अनेक विषयों पर विवाद करनेसे उनकी बुद्धि परिमार्जित हो गई विद्या निखरने लगी।

पाठक गण समझते होंगे कि उनमें अशुद्ध प्रेम नहीं था। भाईका बहनसे, माताका पुत्रीसे, पिताका पुत्रसे जैसा प्रेम होता है ठीक उसी तरहका उन दोनोंमें प्रेम था। धीरे धीरे इस प्रेमकी खबर दोनोंके माता पिताको लगी। दोनों पक्ष विचारशील थे अतः दोनोंका पवित्र प्रेम जान इसमें किसी तरफसे हस्तक्षेप नहीं किया गया।

मध्याह्नका समय था, प्रभावान प्रभाकर अपनी प्रखर किरणों द्वारा सुवर्णकी तरह पृथ्वीतलको तपाकर परीक्षण कर

रहे थे। गर्मीकी लूएं मनुष्योंके वदनको झुलसाती हुई अपनी दुर्जनताका परिचय दे रही थी। समस्त भूतल संतप्त हो रहा था।

ऐसे समयमें अपने बगीचेके मध्यमें बनी हुई बारहदरीमें खसकी हड्डियोंके बीच बिजली द्वारा चले हुए पंखोंकी ठंडी हवा खाते हुए प्रभा और विनोद आराम कुर्सी पर बैठे हुए आजके "भारत" को पढ़ रहे थे। विनोद यकायक रुके। हाथको "भारत" पत्र पर रखते हुए बोले—प्रभा, बहुत दिनोंसे मेरी इच्छा है कि मैं एक निवेदन करूं पर प्रभा बीच ही बात काटती हुई बोल उठी—मगर क्या? कहिए क्या आज्ञा है?

विनोद—मेरी इच्छा है कि हम तुम एक ही साथ रहकर एक ही पथके पथिक बनें, हममें तुममें भेद न रहे, दो शरीर और एक प्राण हों। हमारा तुम्हारा प्रेम अक्षुण्ण हो, कहो क्या तुम्हें स्वीकार है? प्रभाके मनमें न जाने क्यों शंकासी उत्पन्न हुई। वह कुछ न कहकर एक क्षण विनोदके मुखको गंभीर दृष्टिसे देखती रही। और यह कहती हुई कि तुम्हारा इतना साहस! पुरुष जाति बड़ी स्वार्थी होती है! मैं तुम्हें ऐसा नहीं समझती थी, झट बारहदरीसे निकलकर सामनेके कमरेमें चली गई। वहां पहुँचते ही उसका चेहरा क्रोधसे तमतमा गया, हृदय क्रोधाग्निसे धधकने लगा, हीराको बुलाया और कहा कि ऊपर बारहदरीमें पापी विनोद बैठा हुआ है उससे जाकर कह दो

कि वह अभी चला जाय। और फिर कभी इस पवित्र उपवनको अपने अपावन पदोंसे अपवित्र न करें। हीराने मालकिनकी आज्ञाका पालन किया और विनोद आश्चर्यित होकर अपने घरकी ओर प्रस्थान कर गया।

विनोद अपने हृदयके अनेक भावोंका उतराव चढ़ाव करते हुए स्वकीय सदनकी ओर चला जा रहा था। रह-रहकर उसे आश्चर्य हो रहा था। प्रभाने आज मेरे साथ ऐसा क्यों किया? मैंने तो उससे कुछ कहा भी नहीं। मेरा उसमें कुछ स्वार्थ भी नहीं था। मेरी हार्दिक इच्छा थी कि हम एक साथ रहकर मनुष्य समाजका कल्याण करेंगे। उनके हित संपादनमें ही अपना जीवन लगा देंगे।

प्रभा विदुषी हैं, अनुभवी हैं, संसार मर्यादाकी विज्ञा हैं, स्त्री समाजका जैसा वे कल्याण कर सकती हैं वैसा मैं नहीं कर सकता। मैं पुरुषोंका हित करता और प्रभा स्त्रियोंका। हम दोनों भाई बहनकी तरह रहकर कईगुनी शक्ति प्राप्त करते और उनसे प्रभावित होकर देशमें भ्रमण करते, जगह जगह शिक्षाशालाएँ खुलाते। अपवित्र विदेशी दवाओंका बहिष्कार कराकर प्राचीन आयुर्वेदीय औषधालय खुलाकर आयुर्वेदका गौरव बढ़ाते। अप्राकृतिक दवाओं द्वारा जो देशवासियोंका तन व धन नष्ट हो रहा है उसे बचाते।

"यस्य देशस्य यो जन्तु तज्जम्" का सिद्धांत समझाते। किन्तु हाय, प्यारी प्रभा! तुमने न जाने क्या समझा। स्त्रियोंमें

साहजिक शंका है, इसको आज मैंने प्रत्यक्ष देख लिया।

हे भगवान् ! तुम साक्षी हो, मेरे हृदयसे अगर प्रभाके प्रति कोई अशुभ भावना हो तो हे नाथ ! मुझे अवश्य दंड देना किंतु मेरी प्यारी बहिन प्रभाको कुछ भी कष्ट न देना। उसे सुमति प्रदान करना जिससे वो असली नकलीकी पहचान करनेमें, मनोभावोंकी परीक्षा करनेमें सफल हो। वाह रे सच्चे प्रेम ! वस्तुतः तुम स्वर्गीय हो, उन्होंने आजीवन ब्रह्मचारी रहनेका संकल्प कर लिया।

बिनोद अब 'स्त्री हितैषी' सुप्रसिद्ध पत्रके प्रधान संचालक हैं। देशमें उनकी बडी ख्याति है, जहां जाते है हजारों मनुष्योंकी भीड़ उनका स्वागत करती है। स्त्रियाँ तो उन्हें देवर्षि पुकारती है। उन्होंने स्त्रियोंकी शिक्षाके लिए और उनके अधिकारोंके लिए जी जानसे प्रयत्न किया और सफलता उनकी संगनी बनी। अब बिनोद संसारके बिनोद हो रहे हैं। अब उनका प्रधान स्थल बंबई है। वहींसे पत्रका संपादन करते है। लाखों प्रतियां प्रति सप्ताह छपती हैं। बड़े-बड़े देशनेता धर्माचार्य अब बिनोदसे परामर्श लेने आते हैं। नारी स्वत्वरक्षा नाम बिल उन्होंने विचारशील गवर्नमेंट द्वारा पास करा लिया है। इसीकी बधाई देनेके लिए हजारोंकी जनसंख्या उमडी चली आ रही है। स्त्रियां तो उन्हे अपना सर्वस्व देनेको तैयार हो रही है। बिनोदकी बडी प्रसिद्धि हुई।

इस खुशीमें शामको एक सार्वजनिक सभा की गई।

उसमें देशके प्रसिद्ध नेता व देवियोंने विनोदकी बड़ी प्रशंसा की और विचारशील गवर्नमेंटको एक धन्यवादसूचक तार देकर कृतज्ञता प्रकट की। जनता हर्षसे रोमांचित हो विनोदकी ओर देख रही है। करतलध्वनि व जयजयकारके साथ विनोद उठे और बोले—प्रिय महानुभावो! मैं नहीं समझता कि आप लोग मुझे इतना महत्व क्यों दे रहे हैं? यह तो मेरा एक छोटासा कर्तव्य पूर्ण हुआ है। प्रत्येक मनुष्यको अपना कर्तव्य पूरा करना चाहिए। मैं भविष्यमें जनताका हित करनेके लिए सर्वस्व समर्पण करनेको तैयार हूं, ईश्वर मेरी इच्छाएं पूर्ण करे। स्त्रियोंमें शिक्षाकी बडी कमी है मेरी हार्दिक इच्छा है कि मैं एकबार फिर भारती विदुषियोंको देखूं। स्त्री शिक्षाका कुछ प्रचार हुआ है लेकिन अभी नहींके बराबर है।

शिक्षा क्रम बड़ा दूषित है मैं चाहता हूं कि स्त्रियां प्राचीन पद्धति द्वारा अपनी आर्य भाषाओंका ज्ञान संपादन करती हुयीं राज्य-भाषा भी पढ़ें और आदर्श गृह देवियां तैयार हों। देशका उत्थान व पतन स्त्रियोंपर निर्भर है।

स्त्रियाँ चाहें तो भगवान महावीर, भीष्म, श्याम, और बुद्धसी संतानें पैदाकर सकती है और देशका कल्याण कर सकती हैं। इसलिए देशोत्थानके प्रधान अंग स्त्री समाजकी समुन्नति हो ऐसा आप प्रयत्न करें। सेवककी भांति मुझे भी इस सेवामें सम्मिलित समझिये। ऐसा कहकर विनोद बैठ गये और जनताने

महात्मा बिनोदकी जय" के नारे लगाए। साथ ही सभा भी विसर्जित हुई।

प्रभाकी स्थिति बिगड़ती ही गई। माता-पिताकी दशा भी शोचनीय होती गई। प्रभा आजकल बेकार है। नौकरी भी कारणवश छोड़नी पड़ी। अब रह-रह कर उसे बिनोदकी याद आने लगी। "भारत" के मुख-पृष्ठ पर बड़े-बड़े अक्षरोंमें छपा था। हर्ष-हर्ष महात्मा बिनोद द्वारा बिल स्वीकृत हो गया, इससे स्त्री जातिको पूर्णाधिकार प्राप्त हुये। अब प्रत्येक जिलेमें गवर्मेंट द्वारा एक-एक कन्या महाविद्यालय खोला जावेगा, इससे स्त्री जातिका बड़ा कल्याण होगा, बधाई।

कौन बिनोद? क्या वही बिनोद? हां हां वे ही होंगे, बड़े योग्य थे। महात्मा! तुम धन्य हो, मुझ अभागिनको क्षमा करना। चिन्तामणी रत्न हाथमें आगया। मुझ मूर्खाने उसे ठुकरा दिया, अमृतघट मिला, मैंने उसे समुद्रमें फेंक दिया। प्यारे बिनोद! तुम पवित्रात्मा हो, मुझे भी पवित्र करो।

प्रभाने पत्रका पन्ना उलटा, एक आवश्यकता छपी थी। हमें कन्या महाविद्यालयके लिए एक सुयोग्य प्रधानाध्यापिकाकी आवश्यकता है वेतन योग्यतानुसार। लिखो—प्रधान—बिनोद।

प्रभासे अब न रहा गया। बिनोदके दर्शनकी तीव्र लालसा जगी। उसने जाना स्थिर किया। बंबई पहुँची पर बिनोदसे कैसे मिले? उन्हें कैसे मुंह दिखाये? भला जिस बड़े अपमानसे नौकर द्वारा घरसे बाहर करवा दिया क्या उसका

बदला वे कुछ न देंगे ? मैंने व्यर्थ उन पर दोषारोपण किया। क्या वे इसे भूल जांयगे ? कभी नहीं। मगर अब प्रभाको डर नहीं है, प्रभा अपने पापोंका प्रायश्चित्त करने आई है उनसे जरूर मिलूंगी, उनके पैर पकड़ूंगी गिड़ाउंगी। मिलनेका विचार किया मगर पैर उठते ही नहीं थे। भगवान यह क्या ? क्या मैं अन्त समय उनके दर्शन भी न कर सकूंगी ? अन्तमें उसने मजबूर होकर पत्र लिखना आरंभ किया।

१०-३-१९१३ ई०

मेरे प्यारे विनोद,

मैं आज बम्बईमें हूं अपने पापोंका प्रायश्चित्त लेने आई हूँ। क्या आप कृपाकर मुझे अपने पवित्र करकमलों द्वारा प्रायश्चित्त देनेका कष्ट करेंगे ? मैंने अज्ञानता वश आपका निरादर किया, आपको नहीं पहचाना था, यह त्रुटि मेरी किसी भी हालतमें क्षम्य नहीं है, अब मुझसे विशेष लिखा नहीं जाता। क्या आप अन्त समयमें भी इस अभागिनी पर दया नहीं करेंगे ? अगर आपके दर्शन न हुए तो मैं सहर्ष मरण न कर सकूंगी। विशेष क्या ?

आपकी प्रतीक्षामे

अभागिनी—प्रभा।

बिनोद पत्र पाते ही वहां पहुँचे। प्रभाकी क्षीण प्रभा देख विह्वल हुए और बोले—बहन प्रभा, तुम कोई फिक्र न करो भूल मनुष्यसे ही होती है। मैं तुम्हें क्षमा करता हूं। दोनोंका

हृदय भर आया, इससे ज्यादा कोई किसीको कुछ न कह सका। दोनो अनन्त प्रेममें लीन हो गए। धीरे-धीरे पूर्वकी भांति फिर दोनों हिल मिल गए। थोडे दिनोंमें दोनोंने अपने कार्योंसे जनताको चकित कर दिया। विनोदने एक दिन प्रभासे हंसते हुए कहा-कहो प्रभा, अब तो पहचान लिया या अब भी नहीं पहचाना ?

प्रभा शर्मिन्दा हो गई और बोली-क्षमा करें मैं आपको पहचान न सकी।
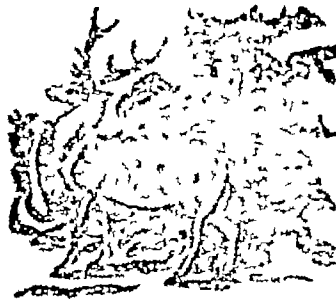
(११)

बिटियाका भाग्य

रातके आठ बज चुके थे। जाडेका मौसम था। चारों ओर कोहरा फैल रहा था। गरीब लोग आग जलाकर ताप रहे थे। रूप-किशोरजी दुकान बन्द करके घर आ रहे थे कि रास्तेमें पं० सुन्दरलालजी मिले। शिष्टाचारके पश्चात् रुपकिशोरजी बोले " पंडितजी ! मैं तो परेशान हूं। मिदियाकी मां अपनी जिद छोडती ही नहीं। मैं तो इन पढ़ी–लिखी औरतों से बड़ा घबराता हूं।

सुन्दर०—" पर बात क्या है कहिए तो। "

रूप०—" आपकी लड़की मिदियाकी उमर शादीके लायक हो गई है। बड़ी कोशिशके बाद नन्दकिशोरजी राजी हुए हैं। उनका लड़का शिवलाल कैसा सुन्दर है। आप तो जानते ही हैं। बड़ी कठिनतासे ऐसे लड़के मिलते हैं। यह संबंध हो जायगा तो बुरे दिनोंके लिए कुछ सहारा मिल जायगा। ये स्त्रियां क्या जानें, चक्की पीसते-पीसते अक्ल तो पथरा गई है। मैंने उससे भी कह दिया है कि–मैं तो शिवलालके ही साथ मिदियाका संबंध करूंगा। "

सुन्दर०—" उनका क्या कहना है ? "

रूपकिशोर—" मैं आपसे क्या कहूं, आप ही उनसे

जाकर पूछ लें। न मालूम पेटमें क्या भरा है? मेरे आगे तो वह मुंह फुलाकर रह जाती है।

सुन्दर०—" ठीक है, आप चिन्ता न करें। मैं उनसे कल जाकर मिलूंगा। आप समझें कि माता अपनी पुत्रीको कभी भी दुःखी नहीं देखना चाहती। संसारमें माता-पिता ही ऐसे हैं जो कि अपनी सन्तानको सुखमय देखकर फूले नहीं समाते है। वे चाहे भले ही चने चबाते हों लेकिन यह उनकी हार्दिक इच्छा रहती है कि उनके लाल मोहनभोग खायें, मोटरोंमें बैठें। मेरी समझमें मिदियाकी माताके कथन पर आपको शान्तिसे विचार करना चाहिए। आप समझे न?

रुपकिशोर—" अच्छा आईये। दूध पीकर ही जायें। घर पर आग जल रही होगी, हाथोंको भी गम कर लीजिए।"

सुन्दर०—रुपकिशोरजी! अभी तो क्षमा कीजिए फिर कभी देखा जायगा।"

पं० सुन्दरलालजीने किवाड़ोंकी सांकलको खड़खड़ाते हुए मिदियाको पुकारा। मिदियाने दरवाजा खोला और पं० सुन्दर-लालजीको सविनय प्रणाम कर मां के पास दौड़ गई और बोली—"मां! पंडितजी आए हैं।"

गुण०—ठीक हैं, जल्दी जाकर खाट बिछा दे। मैं अभी रोटी बनाकर आती हूं। दो लोइयां तो रही हैं।

कुछ समयके बाद गुणवती आई और पंडितजीसे बोली—"चलिए! भोजन कर लीजिए सब कुछ तैयार है!"

सुन्दर०—मैं तो भोजन करके आ रहा हूं। बैठिए। मुझे आपसे कुछ बात-चीत करनी है।

गुणवती—"कहिए !"

सुन्दर०—"मिदियाकी सगाई आपने कहाँकी है ?"

गुण०—अभी तो कहीं नहीं हुई है। वे शेठ नन्द-किशोरजीके पुत्र शिवलालसे संबंध करना चाहते हैं।

सुन्दर०—ठीक तो है। आप इसमें क्या सहमत नहीं है ?

गुण०—नहीं, बिल्कुल नहीं।

सुन्दर०—"क्यो नहीं ?"

गुण०—वे तो लोभमें ही आकर यह सब कुछ कर रहे हैं। क्या आपको मालूम नहीं है कि शिवलाल वर्षों से बीमार है। उसका आचरण भी पतित है। ऐसी अवस्थामें मैं कैसे आंख मींचकर अपनी इकलौती बिटियाको कुएँमे ढकेल दूँ ? आप भी तो विचार कीजिए पंडितजी ! बडे घरानोंकी कुपरिस्थितियां देखकर मेरा तो यही धारणा हो गई है कि बड़े घरानोंमें लड़की देनेकी अपेक्षा गरीबोंको देना अच्छा है।

आप जानते ही हैं कि अभागियोंको कल्पवृक्षोंके नीचे भी इच्छित सामग्री नहीं मिलती है।

क्या लक्षपतियोंकी लड़कियां या बहुएं रोटियोंके लिए नहीं तरसती हैं ? देखिए न ! सुखियासेठकी बेटीके विवाहको छः महीने ही हुए हैं, बेचारी यह भी तो नहीं जानती कि पति किस चिड़ियाका नाम है ?

परसों ही उसका सौभाग्य नष्ट हो गया है। इन सेठोंके साहबजादोंकी दशा क्या है? इनका धार्मिक जीवन कैसा होता है? इनके आचरण कैसे होते हैं? इन बातोंकी आलोचना तथा प्रत्यालोचना करना व्यर्थ है। इनको तो पैसा कमाना ही शुरूसे सिखाया जाता है।

इन लक्ष्मीके दुलारोंके विरुद्ध कोई आवाज उठा नहीं सकता। बुरा न मानें आप लोग भी तो उनकी कोरी प्रशंसा करने लगते हैं। सेटजीने किसी संस्थाको १०००) एक हजार दे दिए कि बस उनकी पीठ पर बधाईयोंकी पोटरी लाद दी। मेरा यह आक्षेप सब श्रीमानों पर नहीं है, लेकिन प्रायः इन लोगोंकी यही दशा है। बचपनसे ही सेठोंके पुत्र कुसंगतिमें पड जाते हैं, अनेक दुर्व्यसनोंके शिकार बन जाते हैं, कोई कोको नबाज बनता है तो कोई सट्टेबाज, कोई वेश्यागामी हो जाता है तो कोई गुंडेबाज। बड़े होने पर रोते हैं और अपने भाग्य पर चिल्लाते हैं। कोई कोई आत्म-हत्या ही कर लेते हैं।

पं० सुन्दर०—यदि ऐसा है तो आप इनसे (सिद्धियाके बापसे) कह दीजिए कि शिवलालसे यह संबंध न करें।

आपका कहना बिल्कुल ठीक है। बड़े घरानेका गृहस्थ जीवन विचित्र ही होता है, इसका कारण शिक्षा और संगतिका अभाव ही होता है।

गुणवती—शिखरजीकी यात्रा मैं गत वर्ष करने गई थी,

स्याद्वाद महाविद्यालय बनारसमें हम लोग चार दिन ठहरे थे। हम लोगोंको शास्त्र सुनानेके लिए सुनन्दन नामका छात्र आता था। उसने न्यायतीर्थ परीक्षा तो पास कर ली है, इस समय बी. ए. में पढ़ता है। मेरी समझसे तो वह लड़का हर तरहसे योग्य है। माता-पिता उसके नहीं हैं न सही। किसके माता-पिता हमेशा जीवित रहते हैं? वह छात्र गरीब है लेकिन कल किसने देखा, गरीबसे अमीर और अमीरसे गरीब बनते क्या देर लगती है?

पण्डितजी! सम्पत्तिका क्या भरोसा? लड़का योग्य होना चाहिए। मुझे धन दौलतसे क्या मतलब? परमात्मा पेट भरनेको देता रहे। शिक्षित तो अपनी स्त्रियोंको गृहिणी, लक्ष्मी, तथा अर्धांगिनी शब्दोंसे सम्मानित करते हैं। कुछ इन्हें पैरोंकी जूतियां या मुफ्तमें मिली हुई दासियां समझते हैं। अच्छा हो यदि आप इनका ध्यान उस छात्रकी ओर आकर्षित करें।

सुन्दर०—मैं अवश्य उनसे सुनन्दनके विषयमें बातचीत करूंगा। आपकी इच्छापूर्ति अवश्य होगी। अच्छा अब मैं जाता हूं। आप किसी तरह चिन्तित न हों।

गुणवतीकी सम्मति स्वीकृत हुई। रूपकिशोरजी बनारस गए और सुनन्दनको अपने घर ले आये। लोगोंने लड़का देखा स्त्रियांभी बरसाती मेघोंकी तरह गुणवतीके घर उमड़ पड़ीं। सबने अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार सुनन्दनके विषयमें सम्मतियां प्रकट की।

एक बोली—" लड़का तो ठीक है, लेकिन गरीब है।

दूसरी—लड़केके माता-पिता तो है ही नहीं। अरी गुणवती। अपनी हीरासी बिटियाको क्यों कांटोमें डाल रही हो। मिढ़िया जैसी पढ़ी लिखी और रूपवती लड़कीके लिए सैंकड़ों लखपती तरस रहे हैं। मन्दिरमें कल मैंने कितनेंही सेठोंके मुहंसे ऐसीही बातें सुनी थीं। मिढ़ियाके बाप तो कहते हैं कि मैं क्या करूं? लड़कीकी मां तो मेरी बातें मानती ही नहीं। खड़ी-खड़ी सब बातें गुणवती शान्तचित्त सुनती रही। एक बुढ़िया तमककर बोली—कलियुग है, माता-पिताको बाल-बच्चेभी तो बुरे लगने लगे हैं। अजी रूपये गिना लिए होगें। नहीं तो कौन अपनी लडकियां गरीबोंको देता है।

खैर, हमें क्या मतलब! जिसकी लड़की वह जाने। गांवभरमें हल्ला मच गया है कि मिढ़ियाकी मांने अपनी लडकी एक भिखमंगेके हाथ सौंप दी हैं जिसके न माता है न पिता। घर बारका कुछ पता ही नहीं है। किसी सेठके सहारेसे पढ़ता-लिखता है। राम-राम! गजब हो गया! मिढ़ियाका भाग्य फूट गया। देखो न कैसी खूबसूरत मोड़ी है। यह तो किसी लखपतीके घरके लायक है।

गुणवती यह सब सुनकर यही कहती थी कि अगर मेरी बेटीके भाग्यमें सुख बदा है तो जंगलमे भी उसके लिए महल बन जांयगे। गरीबका घर उसके जाते ही अमीरका महल बन जायगा।

विवाहका दिन आया और बीत गया। ऐसा विवाह किसीने भी नहीं देखा था। रूपकिशोर काफी धन संपन्न थे। इसलिए सबको उनकी लड़कीके विवाहमें मिठाईयां खानेकी इच्छा थी। रंडियोंकी इच्छाओं पर पाला पड़ गया। बैंड कंपनियां ताकती ही रह गई। रूपकिशोरने अपनी धर्म-पत्नीकी इच्छानुसार विवाह बड़ी सादगीसे किया। जातीय भाइयोंको सिर्फ एक ही दावत दी। अनाथालयके छात्रोंको ४ दिनतक भोजन और ५००) का दान किया।

बी. ए. में सुनन्दन प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण हुआ। सौभाग्यसे सिमरिया स्टेटके दीवानने सुनन्दन जैन बी. ए. न्याय-तीर्थको शिक्षा विभागके उच्च पदपर नियुक्त कर दिया। वेतन भी ४००) मासिक मिलने लगा। सुनन्दनके मित्र अपने सह-पाठीके भाग्योदयपर अत्यन्त प्रसन्न हुए। कारण यह था कि सुनन्दन बड़ा विनय सदाचारी तथा प्रतिभा सम्पन्न छात्र था। वह अपनी कक्षामें हमेशा प्रथम आता था। प्रोफेसरोंकी दृष्टिमें वह एक होनहार युवक जंचता था।

सुनन्दनजी ओफिसमें बैठे हुये काम कर रहे थे। सहसा उनकी दृष्टि एक रंगीन लिफाफेपर पड़ी। उसे खोलकर पढ़ा और मन ही मन मुस्कुराने लगे। उन्हें ससुरने बुलाया था। सेठ रूपकिशोरजीने आग्रह करते हुये लिखा था कि वे मेघा-कुमारी (मिदिया) की जन्म–गांठपर अवश्य आवें।

सुनंदनबाबू अपनी ससुराल गये और अनेक वस्त्राभूषण अपनी हृदयेश्वरीको उसकी जन्मगांठके सुअवसरपर समर्पित किये, जिन्हें देखकर सब चकित रह गये। वे ही स्त्रियां जो सुनन्दन-लालजीकी ओर मातृ-पितृ हीन कहकर घूरती थीं जो उन्हें भिखमंगा कहती थी आज उनकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगीं।

सुनंदनलालजी सिमरिया स्टेटके शिक्षा विभागके पदाधिकारी हैं, उनकी ४००) मासिक तनख्वाह है इत्यादि बातें सुनकर रूपकिशोरको सुहृदयगण तथा श्रीमती गुणवतीजीकी सहेलियां मेघाकुमारीके भाग्यकी सराहना करने लगी। सुयोग्य दामादकी प्राप्ति पर सबने रूपकिशोरजी तथा उनकी पत्नीको हार्दिक बधाईयां दीं, बधाईयोंके प्रत्युत्तरमें उन्होंने (रूपकिशोर तथा गुणवती) प्रसन्न होकर केवल यही कहा—

"यह सब बिटिया ही का भाग्य है"

"खण्डेलवाल जैन" से

(१२)

दत्तक पुत्र

सेठ चंद्रभानजीकी अच्छी संपत्ति थी। व्यापार बड़े जोर-शोरसे चलता था। चारों तरफ आपके धनी होनेकी धाक जमी थी। समाजमें भी आपका गौरव था। इन सब बातोंके होते हुए भी सेठजी बड़े मलिन-चित्त दिखाई पड़ते थे।

चंद्रभान सोचने लगे, हाय! मैं कैसा हतभाग्य हूं कि इतना धनसंपन्न होते हुए भी निःसंतान होनेके कारण भाग्यहीन मनुष्योंमें गिना जाता हूं। ओहो! मेरे इस धनको कौन भोगे-विलासेगा? अगर मेरे संतान होती तो अपनेको बड़ा भाग्यशाली व सुखी समझता।

सेठानीजी—कहिए, आप आज इतने दुःखी क्यों दिखाई पड़ते हैं?

सेठजी—तुम इसका कारण पूछकर क्या करोगी? मेरे भाग्यमें ही रोना बदा है। दुःखी न होऊं तो क्या करूं?

सेठानी—भला बतानेमें भी क्या हानि है? यदि मैं आपका कष्ट बटा नहीं सकती तो क्या पूछनेकी भी अधिकारी नहीं हूँ?

सेठजी—मुझे आज निःसंतान होनेका बड़ा दुःख अनुभव हो रहा है। सोचता हूं कि मेरे इस धन-वैभवको मेरे पीछे

कौन भोगेगा ? मेरा नाम मेरे पीछे कैसे चलेगा। मैं जबतक हूं तभीतक मेरा ठाट-बाट है बादमें सब मिट्टीमें मिल जायगा।

सेठानी—हां, संतान विहीन होना मनुष्यके लिए है तो बुरा, लेकिन इसके लिए पश्चाताप करनेसे क्या लाभ है ? भाग्यमें होता तो क्या चार बच्चे होकर एक भी जीवित न रहता ? खैर अब किया क्या जाय ? मनुष्यको अपने भाग्यपर कभी दुःखी नहीं होना चाहिए बल्कि सदैव आगेके लिए कोई सत्कार्य करके अपनी अमरकीर्ति बनानेका प्रयत्न करना चाहिये। यदि संतान हुई भी और दुराचारिणी हुई तो वंशमें कलंक लग जायगा। संतानका अच्छा होना बड़े भाग्यकी बात है।

सेठजी—बस, किसी प्रकारका प्रसंग हुआ तो तुम मुझे उपदेश देने लगती हो, जैसे कि मैं निरामूर्ख हूं। मैं जानता हूं कि तुम मेरी अपेक्षा अधिक शिक्षित हो तो क्या इसका अर्थ यह है कि तुम मुझपर शासन करने लगो ?

सेठानी—जी नहीं, आप ऐसा न समझें। मैं तो आपके चित्तको प्रसन्न करनेके अभिप्रायसे कहती थी। आपको अधिकार है जो चाहें कर सकते हैं।

किसीके आनेकी आहट हुई।

सेठजी—कौन है ?

सरकार आपको नीचे खजानची साहब बुलाते हैं, यही खबर लेकर आया हूं। जो आज्ञा हो सो कह दूं।

सेठजी—जाकर कहो तुरन्त आता हूं।

सेठजी—कहिए बसंतलालजी क्या काम है।

बसंतलाल—सेठजी, एक मनुष्य कुछ रुपये लेने चाहता है, दस्तावेज लिखनेको राजी है, उसकी जायदादभी अच्छी है, सूद भी अच्छा दे देगा।

सेठजी—अजी साहब यह बात तो ठीक है जब आपने सब पता लगा लिया है तो रुपया देना बुरा नहीं है, परन्तु मैं यह सोचता हूं, कि मैं यह रुपया किस लिए रख रहा हूँ? कोई सन्तान भी नहीं है जो कि इसका भोग करेगी।

बसंतलाल—वाह हुजूर, आपने यह खूब कहा। यदि आपको सन्तान नहीं है तो क्या हर्ज है? आप जैसा अच्छा पुत्र गोद लेना चाहें लीजिए और मन का हौंसला पूरा कीजिए। थोड़े समयमें ही आपका घर पौत्र-पौत्रियोंसे भर जायगा, सारा महल गूञ्ज उठेगा, चहल-पहलसे घर आनन्दमय हो जायगा। जहाँ घर है वहाँ किस चीजकी कमी हो सकती है?

सेठजी—अच्छा भाई, तुम्हारी सलाह मुझे लगी तो अच्छी है, मेरा सूखासा हृदय हरासा लगने लगा है, परन्तु मैं कल इस बातका प्रश्न सेठानीसे करूंगा। देखूं वे क्या सलाह देती हैं? जबतक वे हैं कोई भी बड़ा घरेलू कार्य करनेका दोनोंको ही समानाधिकार है।

वसंतलालजी—हुजूर, आपका कहना बिलकुल सत्य है परन्तु ऐसी ऐसी बडी बातोंमें स्त्रियोंसे सलाह करनेकी आपको क्या आवश्यकता है ? आप अपने पदपर सबसे बडे हैं, भला आपकी आज्ञाको सेठानीजी क्या टाल सकती हैं ? वरन् मैं तो सोचता हूँ वे स्वयं ही पुत्र गोद लेनेको आकुलित होंगी। किसको इसने घरको आनंद निकेतन बनाते बुरा लगता है ?

सेठानी—अजी, आप उनके मिजाजसे उतने परिचित नही हैं जितना कि मैं हूँ। यद्यपि मेरी उनकी सम्मति अपेक्षा कुछ मतभेद सदैव चलता है, परंतु मैं फिर भी कहूंगा कि मेरी स्त्री बडी ज्ञानवती सुशिक्षिता है। उसने मुझे कितनी ही बार बहुतसे आफतोंसे बचाया है।

वसंतलाल—आपके आशयको मैं खूब समझता हूं लेकिन मेरे ख्यालमे पुत्रके लाड प्यार करनेको सेठानीजीका हृदय अवश्य ही लालायित होगा।

सेठानी—जो हो आखिर इतने बडे घर और संपत्तिका उपयोग दूसरा होता ही क्या है ? मेरे बाद भी तो मेरा नाम वंश व गोत्र चलना चाहिए।

सेठानीजी—आपका स्वास्थ्य आज अब कैसा है, तबियत ठीक है न ? कहिए तो कुछ भोजन लाऊं। आपने प्रातःकाल भी कुछ नहीं खाया था। इस तरह डरते रहनेमें फिर कुछ भी हज[illegible] होगा। सदैवके लिए एकबार भोजन करनेका अभ्यास पड़ जायगा। आखिर शरीरको भी तो देखना होगा।

सेठानी—अच्छा थोड़ासा लाओ, अधिक भूख नहीं है। सेठजी थाली पर भोजन करते हैं तथा सेठानी पंखा डुला रही थी। जिससे कि मक्खी भोजनपर न बैठें।

सेठजी—प्रिये! अब तो सूने घरमें रहना बड़ा बुरा लगता है। मेरा मन है कि एक कोई अच्छा सुयोग्य लडका घरमें गोद ले लूँ, जिससे मैं निश्चिन्त भी हो जाऊं, तथा पीछेसे हम लोगोंके वंशका नाम भी बना रहेगा। कहो ठीक है न? तुम्हारी क्या इच्छा है?

सेठानीजी—स्वामिन्! आपने जो प्रश्न किया है वह कोई नवीन बात है, यह तो अपने भारतके कोने-कोनेमें प्रथा चल गई है कि जिसे पुत्र नहीं है वह सबसे पहले सन्तान गोद लेना ही सुलभ समझता है।

पुत्र न होनेपर लेनेवालोंकी तो बात ही छोड़ दीजिए, ऐसे भी अनेक होंगे जिनको पुत्र गोद लेनेके पश्चात् फिर अपना पुत्र उत्पन्न हो जाता है। उन्हें इतना भी भरोसा करना कठिन हो जाता है, जब अपना पुत्र हो जाता है तो लिया हुआ दूसरा बुरा लगने लगता है। मैं आपकी इच्छामें बाधक न बनूँगी, नहीं तो मनुष्य मुझे मूर्खा कहकर अपमानित करेंगे। क्योंकि मैं खूब जानती हूं कि सिवाय मेरे बहुमत पुत्र लेनेकी ही सम्मति देगा, आप पुत्र ले लीजिए थोड़े समयको तो घर भर [illegible]ायग। आगे भाग्याधीन है कि लड़का कैसा निकले!

सेठजी—तुम्हारी बातोंसे तो ऐसा ही मालूम पड़ता है कि तुम मेरी इस सम्मतिके बिल्कुल विपरीत हो। परन्तु मैं इतना कह देता हूँ वृद्धावस्थामें हमलोगों को पश्चात्ताप करना पड़ेगा। जब शरीर थक जायगा कि कोई होता तो हमारी सेवा करता उस समय रोनेसे क्या लाभ होगा?

सेठानीजी—इस समय की कल्पनामें और उस समयकी कल्पनामें मुझे भारी अन्तर दिखाई पडता है। अब समय वो नहीं रहा कि लिया हुआ पुत्र सेवा करेगा। अपने पेट के पुत्र तो बात नहीं पूछते हैं, गोदके क्या करेगें? हां धन के स्वामी अवश्य बन जायगें। यह धन विराना बन जायगा। यदि दान धर्म भी करना चाहेगें तो उनकी आज्ञा लेनी होगी। यदि कोई सपूत होगा तो मैं नहीं कह सकती। नहीं तो मैंने अनेकों प्रमाण आंखोंसे देखे हैं कि माता-पिताका भर-पेट भोजन भी पुत्र को अखरने लगता है।

सेठजी—अजी, तुम तो बच्चों जैसी बातें कर रही हो। भला हम लोगोंके रहते क्या उसका ऐसा अधिकार हो जायगा कि साला हमारा खाना भी देखेगा? भला उसकी क्या ताकत है जो हमारे दान धर्ममें बाधा डाल सके? मेरा स्वयं उपार्जित धन है। वह बीचमें बाधक कैसा? मेरा स्वत्व है चाहे दान करूं, धर्म करूं अथवा उसे दे दूँ। मैं तो तो अपने मनोविनोद के लिये लड़का लेना चाहता हूं न कि अपना घातक बनाना चाहता हूं।

—

सेठानीजी—आपका कहना ठीक है। आप मेरे पति हैं बड़े हैं, मैं अधिक आपसे क्या कह सकती हूं परन्तु मैं सत्य कहती हूं कि जिस वस्तुको आप अपना मनोरञ्जन समझते हैं वही कालांतरमें पैरमें कांटेके समान खटकने लगेगा। फिर यही मनमें आवेगा कि वशमें होता तो पैरसे उखाड फेंकता। दूसरेकी दी हुई वस्तुमें अपना स्वत्व कैसा? यदि अपना ही स्वत्व रखना है तो पुत्र लेना वृथा है।

सेठजी—तुम तो किसी प्रकारसे अपनी सम्मति नहीं देती हो। मैं जानता हूं कि और बातों जैसा इस पर भी तुम्हारा मतभेद रहा, परन्तु मैं क्या करूं? मेरे चित्तमें लड़का लेकर बाप बननेकी बड़ी उमंग हो रही है। इसका दबना कठिन है। तुमको अपनी सम्मति देनी ही पड़ेगी।

सेठानीजी—जब आप पिता बनेंगे तो मुझे माता बनना अनिवार्य है। मैं आपकी उमंगमें कंकड़ रोड़ा बनकर अटकना नहीं चाहती हूं। किंतु आपसे मेरा एक निवेदन है, यदि आप मानें तो कहूं नहीं तो कहना ही व्यर्थ होगा।

सेठजी—भला मैंने कभी तुम्हारा कहना रोका है। जो तुम चाहा हाजिर हो सकता है। कहो क्या बात है?

सेठानी—आप पुत्र गोद ले रहे हैं यह बात अच्छी ही हो रही है। मेरे कहनेका आप पर कुछ असर न हुआ। लेकिन एक बात आपको माननी पड़ेगी वह यह कि आप अपनी

संपत्तिमेंसे कुछ थोड़ासा द्रव्य मेरे नाम स्त्री धनसे कर दीजिए तब आप पुत्र ले सकते हैं।

यद्यपि यह मेरी नीति सुनकर मनुष्य मुझे अनेक प्रकारके भले बुरे शब्द कहेंगे। कोई कहेगा कि स्त्रियां चंचल होती हैं उन्हें अपने पति पर भी विश्वास नहीं होता आदि अनेक प्रकारकी मेरे प्रति टीका-टिप्पणी होगी, परंतु मुझे इनका कुछ ख्याल नहीं है। न जाने भावी पुत्र कुमार्गगामी ही निकल जाय तो मैं वृद्धावस्थामें किसके घर उदरपूर्तिके लिए भिक्षा मांगने जाऊंगी? परमेश्वरकी ऐसी कृपा हो कि वह धर्मात्मा आज्ञाकारी पुत्र हो जिससे हम लोगोंको सुख हो जिसकी कल्पना आज कर रहे हैं। किन्तु बुरे समयको कौन रोक सकता है?

सेठजी—ओहो, तुम तो पागल-सी हो गई हो! जिसको हम अपना पुत्र बनाकर गरीबसे अमीर करेंगे। क्या उसकी ऐसी मजाल है कि हम लोगोंकी तरफ हूं भी कर सकता है। तुम्हारे नाम करनेसे मुझे जरा भी संकोच व भय नहीं है, तुम कहीं ले थोड़े ही जाओगी? कौन जानता है कि तुम्हारी ही बात सत्य निकले। अच्छा बताओ तुम कितनी चाहती हो?

सेठानीजी—मुझे इस विषयमें कहते हुए बड़ी लज्जा लग रही है। साथ ही यह भी ख्याल आता है कि आप समझेंगे कि मुझे आपका विश्वास नहीं है। सो ऐसा न समझें नहीं तो मेरा जीना भी भारी पड़ जायगा। यदि उचित समझें तो समस्त

सम्पत्तिका तिहाई मेरे नाम कर दीजिए। यह भी इसलिए कि किसी आपत्तिके समय काम आवेगा। आपका और मेरा कुछ अलग-अलग नहीं है। मैंने सुना है कि स्त्री धन पर किसीका अधिकार नहीं रहता है।

यदि कोई संकट का समय आ पड़ा तो इस मेरे नामसे निकले धनसे रक्षा हो सकती है। इसीलिए यह प्रस्ताव आपसे किया है अन्यथा मुझे भला अलग लेकर क्या करना है।

सेठजी—खैर, तुम्हारे लिए तिहाई क्या सब भी निकालना मेरे लिए कोई बड़ी चीज नहीं है। मैं तो तुमको अपनी समस्त संपत्तिकी स्वामिनी समझता हूं, तथा अपने से अधिक तुम्हारा स्वत्व समझता हूं। परन्तु अलग करनेको जो तुम जोर दे रही हो संभव है आगे इसमें कोई रहस्य निकले। मैं इसमें अपनी पूर्ण सम्मति देता हूं।

बसंतलाल—हुजूर, एक सज्जन पुरुष आपसे मिलना चाहते हैं। आपकी आज्ञा हो तो ले आऊं।

सेठजी—भला उनका मेरे से मिलने का आशय क्या है? क्या कोई व्यवसायकी बातें करना चाहते हैं? मेरा चित्त ठिकाने नहीं है। इस समय किसी प्रकार की व्यवसायकी बातें नहीं सुहाती हैं।

बसंतलाल—मालिक, वे सज्जन आपसे कोई व्यापार [illegible]

लैन-देन के अभिप्राय से नहीं मिलना चाहते। उनको एक पुत्र है उसे आपको दिखाने लाये हैं।

सेठजी—अच्छा ले आओ। देखूं कैसा लड़का है, कितने वर्षका है ? मैं तो छोटा लड़का लेना चाहता हूं जिससे वह हमें अपना माता-पिता समझे। हमें भी उससे प्रेम रहेगा।

वसंतलाल—हुजूर, आप देखेंगे तो पता लगेगा। लड़का होनहार सा लगता है उमर भी छोटी है। यदि ठीक न जंचा तो घर चला जायगा, कुछ वचन तो दिये ही नहीं हैं।

सेठानी—अच्छा लाओ, देखूं तो सही मामला क्या है।

महाशय—आपका यह पुत्र कितने वर्षका है ?

महाशय—छः वर्षका होकर सातवेंमें लगा है।

सेठजी—बच्चा, तुम्हारा नाम क्या है ?

बच्चा—मेरा नाम चन्द्रकांत है।

सेठजी—चन्द्रकांत नाम सुनकर फूले न समाये। कहने लगे, चन्द्रभानका पुत्र चन्द्रकांत ही होना चाहिए। तुम्हारा नाम भी ऐसा निकला जो बदलना न पड़े।

कहिए महाशयजी ! आपको अपना पुत्र मुझे देना स्वीकार है न ? मेरी आंखोंका तारा रहेगा। यह धन-वैभव सब इसीका रहेगा। मैं कितने दिनोंतक जीऊंगा ? रातदिन यही लगन रहती है कि किसी प्रकार इन भोगोंको भोगकर कोई मेरे चित्तको शांत करे।

महाशय—सेठजी ! आप बड़े वैभवशाली सज्जन पुरुष हैं, मैं एक गरीब मनुष्य हूं। अपनी आत्माको देना बड़ा कठिन है। इन पांच बच्चोंको मैंने बड़ी कठिनतासे पाला है। गरीब होते हुये भी मैंने किसी प्रकारके सुखकी इनको कमी नहीं की। यदि आप इसे अपना पुत्र बना लेंगे तो कसर ही क्या रह जायगी।

सेठजी—क्या तुम कुछ पुरस्कार चाहते हो ? जो चाहो प्रसन्नतासे दूँगा।

महाशय—मैं एक गरीब व्यक्ति हूं नहीं तो रुपया लेकर पुत्र देना आत्महत्याके समान है। किन्तु क्या करूं, समय बड़ा बुरा चल रहा है, सारा व्यवसाय मिट्टीमें मिल गया सोचता हूं कि कुछ रुपया हो तो अच्छा धंधा कर लूं। अन्यथा इन छोटे-छोटे बच्चोंका पालन पोषण कैसे होगा ?

वाद-विवाद होते-होते पांच हजारमें मामला तय हो गया।

चंद्रकांत पूनोंके चंद्रमाके समान दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगे। माता-पिता बालकपनके हास्य-विनोदमें मग्न हो स्वर्गका आनंद लेने लगे। चंद्रकांत पढ़नेके लिए बैठा तो बहुत बड़ा उत्सव मनाया गया, गरीबोंको भोजन मिला, पंडितोंको दक्षिणा मिली, सेठजीका घर रंगों-उमंगोंसे भर गया। सब लोग चंद्रकांतके मुंहकी ओर देखते रहते थे कि कहीं इसे कष्ट न हो।

कुछ बड़े होने पर सेठजीने उसे स्कूलमें भरती करा दिया। घर पर भी मास्टर साहब पढ़ाने जाते थे।

रामकली—सेठानीजी, आपका चन्द्रकान्त तो बड़ा हो चला, विवाह कब कीजिएगा?

सेठानी—अभी बड़ा कैसा? अभी तो स्कूलकी पढ़ाई भी खत्म नहीं हुई है। बच्चा ही तो है। कुछ बड़ा हो जाय तो बहुतेरे विवाह हो जायगें।

रामकली—लाड़चावका तो बालक है, क्या उसे बूढा करके विवाह करेगीं? बड़ी बहू आवेगी तो आपकी सेवा भी न करेगी, छोटी सी लेगी तो हुकमसे खड़ी रहेगी। अब तो लल्लू काफी सयाने हो गए है। १४ वर्षके तो हो गए फिर ब्याह कैसा?

सेठानी—तू तो मेरा मगज चाट गई। क्या मैं ही लल्लूकी सब कुछ हूं? उसका बाप जाने। जब उनकी इच्छा होगी तब करेंगे। मैंने तो सोचा था कि दसवां दर्जा पास करले तो करूंगी, परन्तु सेठजीके मनमें जो होगी वही करेंगे। आदमियोंने घरकी देहलीकी धूल छान डाली है। रात दिन चैन नहीं लेने देते, रोकेंगे भी तो कहां तक?

सेठजी—अजी, सुनती हो कि नहीं? एक बड़े धनाढ्य सज्जन सुबहसे नीचे बैठे हैं। उनको एक ही कन्या है, बड़ी सुन्दर है। कहते है कि जन्म पत्री भी मिल गई है। सगाई पक्की तो कर ही लो, विवाह जब इच्छा हो तब करना।

सेठानीजी—हां अभी एक स्त्री मेरी नाकमें दम कर रही थी। कहती थी कि चन्द्रकांतका ब्याह कर दो। मैं क्या कहूं, जैसा आप उचित समझें करें। चन्द्रकांत क्या अभी ब्याह योग्य है? करना न करना आपके आधीन है।

सेठजी—मैं तो खुद चाहता था कि एन्ट्रेंस पास कर लेता तो ब्याह कर दिया जाता। तुम्हारे मनकी बात भी रह जाती। लेकिन आदमी तो पीछा ही नहीं छोड़ते हैं। मेरी नाकमें दम हो गई है। रात दिन एक आया, दूसरा गया, दूसरा गया तीसरा आया। अतः ठीक यही होगा कि एकसे तय कर लिया जाय। फिर रात दिनकी हाय–हाय तो मिट ही जायगी, पीछा भी छूट जायगा।

सेठानी—तय करना क्या है फिर विवाहकी जल्दी मचावेंगे। बेटीवालोंका तो दस्तूर है कि पहले पक्की करनेको तंग करते हैं, और फिर शादीकी होड़ मचाते हैं। खैर, कर लीजिए। मैं अपनी इसमें खास भी सम्मति क्या दूँ?

सेठजी—तुम्हारे विना हां किये हुए चन्द्रकांतका कुछ नहीं हो सकता। मुझसे अधिक अधिकार तुम्हारा है जब अपनी पूरी२ सम्मति होगी तभी पक्का वचन दूँगा, नहीं तो सालोंको टालता रहूँगा! और उपाय ही क्या है?

सेठानी—नहीं आप पक्का कर लीजिये। रोज२ की हाय हाय बन्द सी हो। जब करना ही हैं तो दो एक वर्षमें क्या हुआ जाता है?

चन्द्रकांतकी सगाई हुए ४ महीने बीत चुके। विवाहकी तैयारीमें सुनार, दर्जी, जरीवालोंकी लेन डोरी लगी रहती है। सेठजीको इस बातका खयाल है कि एक ही लड़का है, कहीं किसी बातकी कसर न रह जाय नहीं तो बदनामी होगी। और तो बच्चे हैं नहीं जिनके कारजमें बदला चुकाएँगे। सेठानीजी भी रात दिन काममें जुटी रहती हैं। सब नातेदारोंसे घर भर गया है। लाखों रुपयोंके हीरा मोती मानकका गहना बनाया गया। जिससे उसकी जोड़ीका दूसरा शहरमे न निकले। अस्तु विवाह हो गया।

बहूको गोदमें लेकर सेठ सेठानी फूले न समाते थे। रातदिन उसके चाँदसे मुंहको देखकर तृप्त नहीं होते थे। संसारका सुख ऐसा होता है कि मनुष्य इसके फंदेमें पड़कर ज्ञान-शून्यसा बन जाता है। सेठानीजी भी वहू लड़केको देखकर अपनेको धन्य मानने लगीं। तथा अपने अकेले घरको भरा देखकर मन ही मन बड़ी प्रसन्न होती थी।- सोचती थी कि यदि मैं लड़का गोदी न लेने देती तो यह सुखके दिन देखनेको कहांसे मिलते, इत्यादि अनेक बातें सोचा करती थीं। सुखका समय शीघ्रतासे भागता है। दुःखका थोड़ा समय मनुष्यको काटने लगता है। सेठ सेठानी सुखमें मग्न हो पुत्रका आनन्द देखकर अपनेको धन्य समझने लगे।

चन्द्रकांत स्कूल तो जाते ही थे, पढ़नेमें उनका मन बचपनसे ही कम लगता था। सब समझते थे कि बड़े होकर

लगने लगेगा। अभी बच्चा है इसीसे खेलमें ज्यादा जी लगता है।

मास्टर—सेठ साहब ! चंद्रकान्तजी मेरा कहना नहीं मानते। बार-बार कहने पर भी सबक नहीं याद करते। यदि डांटता हूँ तो जवाब देते हैं—कहते हैं कि हम दूसरा आदमी रख लेंगे, तुमसे मुझे पढ़ना नहीं है। कहिए क्या आज्ञा है, मुझे सिर्फ इसी बातका भय है कि आपका रुपया लेकर बाबू साहब न पढ़ेंगे तो हमारी बदनामी होगी।

सेठजी—अजी वह बालक है, उसके कहनेका कुछ ख्याल न कीजिए। मैं उसे समझा दूँगा, याद किया करेगा। मास्टर साहब ! जैसा आपका लड़का वैसा मेरा, किसी तरह पढ़ाइये। पढ़े बिना आज कल कुछ नहीं होता, अपने घरका धंधा भी कैसे संभालेगा ?

मास्टर—हुजूर, इसी बातका ख्याल तो मुझे भी है तभी तो हुजूरसे अर्ज करने आया हूं। यदि अपना बालक न समझता तो आपसे निवेदन ही न करता क्योंकि वेतन तो मिलता ही चला जाता है फिर हमको क्या गरज पड़ी, ऐसा कहकर टालते चला जाता।

मास्टर—चंद्रकान्तजी अच्छी तरह पढ़ा करो नहीं तो मालिकने कह दिया है, अब मैं तुम्हें सजा दूँगा।

चन्द्रकांत—दीजिए न सजा कौन करता है ? मुझे क्या आपके समान मालिकका डर पड़ा है ? नहीं याद होता तो

क्या करें ? आपको तो अपने रुपयेका ख्याल है कि न मिलेगा तो खायेंगे क्या ? मुझे आपका डर नहीं। सैकड़ों मास्टर मिल जायेंगे।

मास्टर—(मन ही मन) यह तो बाप होता जाता है। यह क्या पढ़ेगा ? जरासे टोकनेपर तो इसने इतनी बातें सुनादीं, कहीं हाथ उठ गया तो मार ही खानी पड़ेगी। मालूम होता है कि यह आवारा होता जाता है। अब क्या पढेगा ? नौकरी छोड़ना अच्छा है अन्यथा बदनामी होगी।

सेठजी—बेटा चन्द्रकांत ! सुना है कि आजकल तू पढता नहीं है आखिर बात क्या है ? पढनेमें मन लगाया कर नहीं तो पास कैसे होगा ? देख तो तेरे बराबरका ही लड़का बालमुकुन्दका है वह कितना होशियार है। तेरेसे दो दर्जे ऊंचा पढ़ता है।

चन्द्रकांत—बाबूजी पढता तो हूं क्या करूं ? आपसे तो सब झूठ झूठ चुगली लगा देते हैं। रोज तो पढता हूं।

सेठजी—ऐसे पढ़ने और मन लगानेमें बड़ा फेर है। मन लगाया करो।

चन्द्रकांत—अपनी मोटरमें बैठे २ इधर उधर सैर करते थे। मास्टर आकर झक मारके चले जाते थे। धीरे धीरे चन्द्रकांतके मित्रोंकी एक अच्छी मंडली जम गई। अब क्या था, रात दिन बाहर पड़े रहना, कभी घर आना और खाकर चले जाना किसीसे कुछ मतलब नही है।

सेठानी—पहले तो घर रहता था, अब तो घर भी छोडता चला जाता है। यह दुष्ट बुरे लुच्चोंके संगमें पड़ गया है। हाय अब क्या होगा ? इस घरका बेडा कैसे पार लगेगा ?

सेठजी—उदास क्यों हो ?

सेठानीजी—क्या करूं अपने भाग्यको रो रही हूं। क्या मालूम नहीं है ? कुमारजीके रात दिन घर दर्शन नहीं होते। यह छोकरा तो पक्का आवारा हो गया। घरकी आबरू कैसे बचेगी ?

सेठजी—अजी क्या कहूं, मुझे तो बड़ा सदमा हो रहा है, परंतु क्या करूं ? तुमसे मैं क्या मुंह लेकर कुछ कहूं। मन ही मन घुलता रहता हूं। कल मेरे पास स्कूलके हेडमास्टर आये थे। कहते थे कि चंद्रकांतको हम स्कूलसे निकाल देते हैं, वह गुण्डोंका साथी बन गया है। स्कूलकी बदनामी होगी। ऐसे लड़केको हम नहीं रख सकते। क्या करूं कुछ अक्ल काम नहीं देती।

वसंतलाल—हुजूर, एक महाजन कोठीमें बैठे हैं, एक पुरजा दिखा रहे हैं। कहते हैं कि चंद्रकांतने हैंडनोट लिखकर रुपया लिया है दीजिए।

सेठजी—हैं, कितने रुपये मांगता है ?

वसंतलाल—पांच हजारका हैंडनोट है।

सेठजी—मार डाला इस लड़केने। इतना घरसे लेता है तिसपर भी कर्जा। अब इज्जत कैसे बचेगी ?

सेठानीजी—अब घबरानेसे काम कैसे चलेगा? कोई सुधारनेका उपाय करिए। छोटोसी बहू रात-दिन घरमें पड़ी है, दुष्टको इसका भी ख्याल नहीं है।

सेठानी अजी क्या कहूँ, अब तो कानों पड़ी बातोंका ठिकाना ही नहीं है। रात दिन चारों तरफसे यही बातें सुननेको मिलती हैं। सुना है दोस्तोंको लेकर मुजरोंमें जाता है, शराब भी पीने लगा है, कोई लत बाकी न रही। रात-दिन दुनियांसे रुपया रूक्का लिख-लिख कर ले रहा है। सब लोग भी तमाशा देखनेको दे देते हैं कि भारमें तो है ही नहीं, एक दूना मिल ही जायगा। हजारों रुपये दे चुका हूं।

सेठजीके घरमें प्रातः काल बड़ा भारी शोरगुल मच रहा है, पुलिस बैठी है, तहकीकाते हो रही हैं, आदमी गिरफ्तार हो रहे हैं. मालूम नहीं क्या मामला है।

दीनदयाल—अजी हमें क्या पड़ी, कुछ होगा। जिस पर पडेगी वह भोगेगा। गरीब थोड़े हैं, शहरके अच्छे धनी हैं, आप संभालेंगे।

रामू—नहीं भाई हमलोग पडोसी हैं, हमारा यह धर्म नहीं है, देखे तो बात क्या है?

दीनदयाल—देखो न, मना कौन करता है?

रामू—अरे भाई सेठजीके घरमें बड़ी भारी चोरी हो गई है, तोसकखानेका सब गहना कोई रातमें ले गया है, उसीका कोलाहल है।

दीनदयाल—कौन ले जायगा ? उन्होंने ही अपना लड़का बड़ा बिगाड़ रखा है। रातदिन मोटरपर गुन्डोंके संग घूमता देखता हूं। उसीने हाथ मारा होगा। यह दुर्व्यसन जो न कराले थोड़ा है। सेठ सेठानी हाय-हाय कर रहे हैं। लाखोंका गहना सब घरसे चला गया। नगदी रुपया कोई ले गया। बेचारे दोनों प्राणी अधमरे हो गये हैं। साथमें बिचारी बहूकी भी खराबी है। वह अपने पतिकी दशा देखकर मन ही मन दुःखी होती है। बेचारी करे भी क्या ?

सेठजी—अब क्या करूं किससे कहूं ? सब करनी तो मेरी ही है। इसे न घरमें रखता न यह दिन आता। निश्चय इसी दुष्टने चोरी कराई है, किसी दूसरेका काम नहीं हैं।

वसन्तलाल—हुजूर ! चोरीका पता नहीं लगा। कुछ सुनाई पड़ता है कि जानते हुए मनुष्यका काम है।

सेठजी—चुल्हेमें जाय, मैं क्या करूं। मैं बिना जानें किसी निर्दोषीको नहीं फंसाऊंगा। यह सब चन्द्रकांतका फिसाद है उसीको रुपयोंकी हाय पड़ी है।

बसंतलाल—हुजूर ! लगता तो सभीको ऐसा ही मामला है। परन्तु आपके डरसे सब लोग चुप हैं।

सेठानीजी—अब रोनेसे क्या लाभ है। पहले ही समझ जाते तो ये दिन क्यों आते ? उस समय मैं बुरी लगती थी, बेटेका चाव चढ़ा था, अब कैसी इज्जत बढ़ रही है। मुंह

दिखानेको जी नहीं करता। इस बेटेने तो फकीर बना दिया। लाखोंका घर मिट्टीमे मिल गया।

सेठानी—अजी कुछ न पूछो, अब तो खानेका भी ठिकाना न रहा, वह बाहर ही बाहर बड़ा कर्ज ले रहा है। चाहे जिस चीजको रहन कर देता है, चाहे जिसमे हेंडनोट लिखकर रुपया ले लेता है, मेरी तो अक्ल काम नहीं करती।

सेठानी—अजी आप तो उस जरासे लड़केसे डरते भी बहुत हैं। जरा बुलाकर समझाइये न माने तो डराओ, धमकाओ, संभव है कुछ काबूमें आए। ऐसा क्या सिंह होगया है?

सेठजी—चन्द्रकांत, आजकल कहां फिरते हो, घर पर क्यों नहीं रहते? तुम्हारी माँ रातदिन तुम्हारे लिए रटती है।

चंद्रकांत—क्या कहा आपने? मैं क्या अम्माको पकड़ कर बैठा रहूं? मुझे कितने ही बड़े बड़े आदमियोंसे मिलना जुलना रहता है। मुझसे घरमें रहकर सड़ा नहीं जाता। यह थोड़ीसी जिन्दगी दुनिया देखनेको पाई है न कि घरमें पड़े रहनेको।

सेठजी—बेटा तू तो सीधेसे बात भी नहीं करता, मैं तुम्हें कुछ समझाना चाहता था कि तू ही मुझे घुड़कने लगा। अच्छा जो तुम्हारी इच्छा हो कर, परंतु घरकी मर्यादाका भी कुछ ख्याल कर। मैने तुझे इस ख्यालसे रखा था कि बुढ़ापेमें

तू हमारी सेवा करेगा, तू हमारे बुढ़ापेकी लकड़ी होगा, लेकिन तू तो हमारी सूरत भी नहीं देखना चाहता है। इस तरहसे घर कैसे चलेगा ?

चंद्रकांत—बस, बकबक मत करो, नहीं तो मैं अभी तुम्हारी सब सेवा किए देता हूं, जो बराबर याद करोगे। नशेमें घूमता हुआ चंद्रकांत भानचंद्र पर टूट पड़ा, और उनका गला मरोड़ने लगा। पासहीमें एक लाठी पड़ी थी उसे लाकर मारना ही चाहता था कि सेठानी तथा अन्य जनोंने आकर बचा लिया।

सेठानी—अब इसके पास रहना ठीक नहीं है। इसे अपने हित-अहितका बिल्कुल ज्ञान नहीं रहा। जब यह ऐसा नीच हो गया है तो इसका मुंह देखना भी पाप है।

सेठजी बिचारे किंकर्तव्य विमूढ़से होकर गुम हो गए। क्या सोचते थे क्या हो गया ? अब अपने दुःखकी गाथा सुनाएं भी तो किसको ? जिससे कहें वही अपनेको आता है। आज सेठानीके वाक्य चन्द्रभानके हृदयमें आ आकर बड़ा ही आंदोलन मचा रहे हैं। कालांतरमें पैरमें कांटेके समान खटकने लगेगा।

सेठजी—अब मेरी जान बचाओ, इस दुष्टसे पीछा छुड़ाओ। अब कहीं जाकर जान बचानी होगी।

सेठानी—आपको अब भी समझाना चाहिए, यदि अब

गोता खाया तो कभी उठनेका समय न आयगा। यदि मैं कुछ हिस्सा अपने नाम न कराती तो आज किसके घर जाकर भीख मांगती ? खैर हुई सो हुई, जाने दीजिए।

सेठ चन्द्रभानको लेकर सेठानी अलग मकानमे रहने लगीं। जो कुछ सम्पत्ति अपने नामकी थी, वही बची और सब चंद्रकांतने मिट्टीमें मिला दी।

अंतमें सेठानीने अपना बुढापा समझकर सेठजीकी अनुमतीसे अपनी समस्त संपत्तिका बिल कर दिया जिससे चंद्रकांत न ले सके। सेठानीजी बड़ी धर्मात्मा सदाचारिणी स्त्री थी। वे बहुत थोड़ेमें अपना गुजारा कर लेती थी, बाकी द्रव्यको अच्छे-अच्छे सत्कार्योंमें लगा देती थीं। आपको मान बडाईकी तनिक भी इच्छा न थी।

आवश्यकतानुसार सदैव द्रव्यका सदुपयोग करती थीं। आपने अनेक पुराने जिन मन्दिरोंका जीर्णोद्धार कराया। विद्यादानमे भी अच्छी रकम लगा दी। सेठजीके नामसे एक ऐसा बिल किया जिससे गरीब, असहाय और विधवा बहनें उच्च कोटिका धार्मिक ज्ञान प्राप्त कर समाज-सेविका बनें। उन्हें आजन्म समाजका ही उपकार करना अनिवार्य होगा और कोई अन्य कार्य न कर सकें। इसी प्रकार पुरुष वर्ग भी उच्च कोटिके विद्वान बनकर समाजके हितरूप कार्य करें।

सेठानीकी बुद्धिमतासे गये हुयेमेंसे भी धन माल मर्यादा बच गई तथा अनेक सत्कार्य हो गये।

इस ऊपरकी कहानीसे हमारी विधवा बहनोंको हृदयमें अच्छी तरह प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिये कि यदि वे धनवान हैं, निःसंतान हैं, तो धनका लोभ छोड़कर पुत्र कभी गोद न लें। अपनेसे ऐसे२ अद्भुत कार्य कर दिखावें जो संसारके इतिहासमें सदैवके लिए स्वर्णाक्षरोंमें अंकित रहैं। जन्म जन्मान्तरमें उनकी अमर कीर्तिका डँका बजता रहै। पुत्र तो दो चार पीढी तक आपका नाम रख सकता है परन्तु सत्कार्य सदैवके लिए अमर रहते हैं। मनुष्यको उच्च मार्ग पर ले जानेवाला दान ही है। इससे लोक और परलोकमें आत्माको लाभ होता है।

—श्रीमती विदुषी ब्रजबालादेवी जैन महिलारत्न, आरा।

(१३)

मनोहरबाबू

रामनाथजीके पुत्र मनोहरबाबूको मैट्रिक तक पढ़नेके बाद विलायत जानेकी धुन सवार हो गई। जब ये छुट्टियोंमें घर आते तो अपने मातापितासे इसीका आग्रह करते। परंतु गांव निवासी रामनाथजी राजी न होते थे। एक दिन उन्होंने समझाया—बेटा! वहां जानेसे रुपये बहुत लगते है, हम गरीबोंके पास इतना रुपया कहांसे आयगा? तुम हमारी इकलौती संतानको हम छोड़कर कैसे रहेंगे।

मनोहर—पिताजी, यह विज्ञानका जमाना है, इसमें असली विज्ञान बिना बाहर जाये हो ही नहीं सकता है, आप इंग्लिश नही पढ़े है, आपको दुनियांका हाल मालूम नहीं है। देखिए जर्मनीमें इतना बड़ा संग्रहालय है जिसके देखनेमें ९ मील चलना पड़ता है। उसमें चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण आदि साक्षात् करके दिखाए जाते हैं। विमानोंका बनना दिखाया जाता है, खानोंके कारखानें और समस्त संसारके मशीनोंके कारखानें दिखाए जाते है। कहिए यह भारतमें कभी थे या हो सकते हैं?

रामनाथ—भैया यह न कहो, आज भारतमें ये चीजें नहीं हैं परन्तु पहले सभी थीं। रामचन्द्रजीका पुष्पक विमान

सर नाम है, वह तो आकाशमें खड़ा भी रहता था, जहां चाहे वहां बिना दौड़ लगाये उतर भी आता था। जैसी उसकी मशीन थी वैसी अब नहीं बन सकती है। सत्यंधर भगवानके पास मयूर विमान था। प्रायः सभी राजा लोग विमान रखते थे।

इसी प्रकार भूविद्या और ज्योतिष विद्या भी चढ़ी बढी थी। अब कम हैं इसमें दोष भारतका नहीं है परन्तु जो जो राज्य शासन होते गये हैं उनका है।

मनोहर—अजी, अब पुरानी बातोंके रोनेसे क्या होगा? रुपयाका प्रबंध कर दीजिए, इस खेतकी मशीनको बेच दीजिए, व्यर्थके गहनोंको बिकवा दीजिए और दस हजारका प्रबंध कर दीजिए। फिर देखिए मैं वहांसे पढ़कर आऊँगा तो आपको मालामाल कर दूँगा, फिर क्या आपकी दशा यही रहेगी?

रामनाथ—बेटा! हमें तो कुछ दुःख नहीं है। अन्न, दूध, घी सब चीजें घरमें भरी रहती हैं। हाँ, जमींदारी बिकनेसे कष्ट हो सकता है परन्तु हम दोनों तो बहुत थोड़ेमें रह सकते हैं।

जेवर तो तुम्हारी बहूके पास हैं उसे मैं नहीं लेना चाहता हूं। भले घरकी लड़की है, उसका जी दुखेगा। वह तो उसीका हो चुका है।

मनोहर अपनी पत्नीके पास गये और उस बालिकाको समझा बुझाकर राजी कर लिया। वह जेवर देकर भी पतिकी

प्रसन्नतामें ही प्रसन्न थी। इधर माताको यह संवाद मालूम हुआ तब उन्होंने बडा ही हल्ला मचाया।

और कहा—बेटा मनोहर! मेरे आंखोंके तारे!! मैं तुझे इतनी दूर नहीं जाने दूँगी। मनोहर बड़े असमंजसमें पड गये, सोचने लगे कि यह बुढ़िया बने बनाए कामपर पानी फेरती है। इसे किसी प्रकार राजी कर लूं, तब सारा काम हो जायगा, वरन् पिताजी भी ठंडे हो जायेंगे।

मनोहर—मां! तू संसारका हाल कुछ भी नहीं जानती है। देख, मैं पढकर आऊंगा तब तेरा यह घर महल-सा बनवा दूँगा। हजारों रुपये महीनेकी नौकरी मिल जायगी। मैं जहां रहूँगा वहां तुझे भी आनंदसे रखूंगा। मुझे रोककर दुःखी जीवन क्यों बिताती है?

माता—अरे भैया! हमें कुछ नहीं चाहिये। तू अच्छा रहेगा तो सब यहीं हो जायगा। विलायत जाकर तू जैसे-जैसे फैशन सीखेगा उसीमें हजारों रुपये खर्च कर देगा। बेटा! हमसे बूढ़े-बूढ़ियाके पास क्यों रहेगा? मैंने बहुतसे लड़के देखे हैं। माता-पितासे अलग लड़कियोंसे बातें करते हैं। क्यों अपना धन और दीन दोनों देता है। देख, कामवालोंको यहीं बहुतसे काम मिल जाते हैं। यहां एक-एक व्यापारी लाखों रुपये साल कमाते हैं। उन्हें तेरे जितनी अंग्रेजी भी न बोलनी आती होगी। कितने ही विलायतसे लौटे लड़के नौकरियोंको डोलते रहते हैं।

भईया, भाग्य भी तो चीज है, अच्छे काम करो अच्छा फल मिलेगा।

मनोहर—मां प्यारी मां, मेरी भलाईमें रोड़ा न अड़ाओ। मैं तेरा लड़का सदा तेरा भक्त रहूंगा। किसी प्रकारका डर मत करो मुझे जाने दो। मांका जी पिघल गया, मनोहरबाबूकी विजय हुई। सफरकी तैयारी होने लगी।

एक महीनेके बाद मनोहरबाबू रवाना हो गए और १५ दिनोंमें योरोप पहुंचकर अपनी इच्छानुसार पढ़ने-लिखने लगे। घरके रुपयेमें क्या होता है इन्हें तो महीनेभरमें ही हजार रुपये चाहिए थे। बस वहांसे पिताके पास नित्यप्रति पत्र आने लगे और दो माहमें ही उन्हें और रुपया भेजना पड़ा। धीरे-धीरे घरबार सभी बंधक हो गये। जमीन जायदाद बेच-बाच कर किसी प्रकार मनोहरबाबूको रामनाथ रुपये भेजते रहे। बहुत प्रतीक्षा करनेके बाद उन्हें समाचार मिला कि मनोहरबाबू लौट रहे हैं।

इस समयकी खुशीका वर्णन करना कठिन है। पिताका गला रूंधने लगा, पत्नी हर्ष-विह्वल हो उठी। रामनाथने पत्नीसे कहा—मेरी इच्छा होती है कि बम्बई चलकर मनोहरको जहाजसे उतार लाऊं। कभी बम्बई नहीं देखी है, न जहाज ही देखा है, चलो तुम भी चलो।

पत्नी—यह सब तो ठीक है पर रुपये कहांसे लाओगे? घरमें बहू अकेली रहेगी, इतना खर्च सहन कर सको तो चलो,

मैं तो खुद ही दिन गिन रही हूँ, कब प्यारे बच्चोंको देखूंगी ?

रामनाथ—तुमने कहा सो सब ठीक है परंतु यह तो सोचो कि लड़का आ रहा है। नौकरी मिली, मिलाई है, यह भी अंतिम खर्च है फिर हम तुम सुखसे रहेंगे। बस पत-पत्नी कर्जमें रुपये लेकर बंबई रवाना हो गए।

बेचारी बहू तेजरानी दिल मसोसकर घरमें रह गई। वह भी पतिदेवके दर्शन जल्दीसे जल्दी करना चाहती थी। दिनोंको गिनकर ही संतोष कर लेती थी। बूढे गाय-भैंसवाले चरवाहे पर ही बहूका सब भार सौंपा गया था। आज दोपहर समय बूढ़ा भैंस चराने चला गया। तेजरानी अपने घरमें बैठकर कुछ सिलाईका काम कर रही थी कि यकायक एक भीतर आकर कुछ कहने लगा।

तेजरानी—(किवाड़की ओटसे) आप इस समय चले जाईये, शामको बूढे आयेंगे तो सुनेंगे।

युवक—क्या कहती हो, तुम तो बड़ी दयावती और चतुर गिनी जाती हो, मेरा इतना अपमान क्यों करती हो ? मुझे तो आपसे ही कुछ बात करनी थी, कहकर चला जाऊँगा बूढे खूसटसे क्या करना है।

मैंने सुना है कि मनोहरबाबू आनेवाले हैं, सुनकर बड़ी खुशी हुई है, भगवान आपको यह दिन मुबारिक करे, परन्तु

एक बातका बड़ा रंज भी हुआ है शायद वह आपको मालूम न हो।

हमें बड़े विश्वासी आदमीसे मालूम हुआ है जो कि अभी विलायतसे लौटा है कि मनोहरबाबूने एक मेमसे विवाह कर लिया है। वे शायद ही यहां आयें, वरन् बंबईमें ही ठहर जायगें। आपको विश्वास न हो तो मैं उस पत्रको सुना दूँ जो कि गंगाप्रसादने लिखा है। गंगाप्रसाद इसी साल बैरिस्टर, यह तो आपको मालूम ही होगा।

तेजरानी–जी हाँ, मालूम है, बस अब आपका कहना हो गया न ? आगे कष्ट न करिए जाइये। जो होना होगा, होगा ही।

युवक–अच्छा जाता हूँ फिर कोई खबर होगी तो दूँगा, पत्र दिखाने फिर एक–बार आऊंगा। यह कह कर वह चला गया। तेजरानी सोचने लगी कि मैं बड़ी डरपोक हूँ। बार–बार जानेको कहने लगी। क्या यह खबर ठीक है ? आशा तो नहीं, परन्तु हाँ एक बार पतिदेवके पत्रसे भी तो यह बात झलकती थी, देखूं फिर पढ़ूं क्या लिखा है। अरे, बडी कठिनतासे तो इतना पढ़ना लिखना आया है। तेजरानी पत्र पढ़ने लगी। ओहो, ! यह लाइन सन्देहजनक है। प्रिय ! एक अनोखी चीज मैंने ले ली है। परन्तु इसने मुझे ऐसा फंसाया है कि साथ लानी होगा। तुम नाराज न होना।

यह क्या चीज है, कई बार पूछा पर उत्तर मिला क्या यह सपत्नी है। जो हो राजी-खुशी लौट तो आयें देखा जायगा। दूसरे दिन तेजरानी शौचके लिए जंगलमें दूर निकल गई। कुछ विलम्ब हो गया था अतः कोई दूसरी स्त्री न मिली। एकदम उसी युवक पर नजर पडी, तेजरानी समझ गई। युवक हाथ जोड़कर अनेक अनुनय-विनय करने लगा। बहुत प्रेम दिखाया, डराया, चमकाया और हाथ पकड़नेको दौड़ा। अब तो सतीका रूप प्रचन्ड हो गया और अपने बलको प्रकट करने लगा। तेजरानीने देखा कि कहने, सुनने, और धमकानेसे यह न मानेगा, शोर-गुल करनेसे सुननेवाला कोई नहीं है। नीचे पृथ्वी और ऊपर आसमान है।

हे भगवान्। मेरी रक्षा हो, मेरा सतीत्व धर्म उज्वल बना रहे, ऐसा विचारते-विचारते उसने अपने हाथका लोटा निशाना लगाकर युवककी नाक पर दे मारा। जिससे खूनकी धार बह निकली।

युवक बैठ गया, सती दौडकर घरकी ओर बढ़ी, उस दिन अपने सतीत्वकी रक्षा जान तेजरानीने पूजन, भजन और दान किया। अब वह सचेत हो गई और अपने सतीत्वकी रक्षा करनेमें अधिकाधिक सावधान हो गई।

इधर रामनाथ सपत्नीक बंबई पहुंचकर जहाजके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे। आखिर वह दिन आ ही गया। रामनाथ

और उनकी पत्नी समुद्र तटपर गए और वहाँ पूछ ताछ करने लगे। आफिसमें मालूम हुआ कि जहाज पर टिकट लेकर जाना पडता है। फी टिकट १०) दस रुपयेका होगा।

रामनाथका सिर चक्कर खाने लगा, उन्होंने पत्नीसे कहा—तुम यहीं बैठो, मैं अकेला ही जहाज पर जाऊँगा क्योंकि १०) का टिकट लेना पड़ता है और नावपर चढकर वहां तक जाना पडता है। रामनाथने पत्नीको ताजमहल होटलके सामनेवाले मैदानमें बैठा दिया और खुद टिकट लेकर और लोगोंके साथ नौकामें बैठ गया। पास ही जहाज खडा था। नौका ढकेलकर नावकी सीढ़ियोंके पास लगा दी गई। सब लोग अपना अपना टिकट दिखाकर केबिनका नंबर मालूम कर आगे बढ़ने लगे। रामनाथने ऐसे ठाट कभी न देखे थे, यह जहाज क्या था, एक अंग्रेजी तरीकेका महल था या मुहल्ला था। इसमें कतारसे बने कितने ही कमरे थे। सबमें पलंग, कुर्सी इत्यादि सजे थे। पढ़ने लिखनेवालोंके आफिसके सिवा पुस्तकालय भी था। कहीं चमचमाती सीढियां थीं कहीं स्नान करनेके लिए कुंड बने थे। तात्पर्य यह था कि इस रचनाको देखकर राम-नाथ इस बातको भूल गए कि हम जहाज पर हैं। उन्हें तो यह एक भारी भवन दीखने लगा।

अस्तु, जैसे बछड़ेसे बिछडी गाय रंभाते हुए चारों ओर देखती है उसी तरह रामनाथ भी पुत्र मनोहरलालके कमरेकी

ओर झपटे। किन्तु उसने इशारेसे मना कर दिया। रामनाथ चुपचाप खडे रहे। मनोहरके कमरेमें दूसरे अंग्रेज महाशय थे जो उतरनेका ही प्रबंध कर रहे थे। उन्होंने मनोहरसे पूछा—यह कौन है? मनोहर जल्दीमें क्या उत्तर देते और अपनी इज्जत कैसे बचाते।

अपने मित्रसे स्पष्ट बात कहनेमें लज्जा आती थी। क्योंकि कहाँ अपने ठाट और कहाँ मोटी धोती, फटे जूते और ओछा कुरता पहने हुए वृद्ध पिता। दोनोंमें बड़ा अन्तर था। वह बोल उठे—मैं नहीं जानता, कोई कुली होगा। यद्यपि ये बातें इंगलिशमें हुई थीं परन्तु रामनाथजी ताड गए। ये बड़े बुद्धिमान गृहस्थ थे। उन्होंने समझ लिया कि मुझे कुली कबाडी बता रहा है।

अब तो और भी स्पष्ट हो गया। वह अंग्रेज कहने लगा—कुल इधर आओ, इसे उठाओ। बस रामनाथका पारा चढ़ गया, उन्हें तो पास आनेसे रोकने पर ही मनोहर पर क्रोध आ रहा था। अब तो ताव आ गया। वे अपनेको न संभाल सके, और आगे बढ़कर एक तमाचा मनोहरलालको गाल पर जमा दिया। कुछ गालियां देकर पीछे लौट आये। स्थल पर आकर पत्नीसे कहा—चलो बस हो गई मुलाकात अब यहाँ ठहरनेका हुकम नहीं है, जिद करोगी तो गिरफ्तार कर ली जाओगी। मनोहरको गरज होगी तो गांव पर आ जायगा। दोनों टिकट लेकर डाक

गाड़ीमें बैठ गए। मार्गमें बुद्धिमती पत्नीने क्रोध शान्त करनेका प्रयत्न किया और सारी बातें पूछ लीं।

अन्तमें कहा कि मनोहरकी नालायकीमें तो कसर नहीं थी, पर आपको भी हाथ चलाना उचित न था।

उधर जहाजमें हंसी होने लगी। कितने ही भारतवासी पिताके साहसकी प्रशंसा और कितने ही निन्दा करने लगे। मनोहरने भी दिलको समझा लिया कि खैर, मारा तो मारा ही सही, नया नही मारा है, न मालूम छुटपनमें कितना पिटा हूं। तौ भी शरमसे सिर गड़ गया और ज्यों-त्यों असबाब लेकर जहाजसे उतर कर लज्जासे मुक्त हुआ।